अध्याय 16

हमारा अतीत

हम जिस समाज में रहते हैं उसके परिवेश की हमें आदत पड़ जाती है। हम यह मान लेते हैं कि दुनिया हमेशा ऐसी ही रही है। हम यह भूल जाते हैं कि जीवन हमेशा वैसा नहीं था जैसा हमें आज दिखता है। क्या हम ऐसी दुनिया की कल्पना कर सकते हैं जहाँ आग न हो, जब खेती–बाड़ी का आविष्कार न हुआ हो ? उस समय का जीवन कैसा रहा होगा जब लोग यात्राएँ तो कर लेते थे पर सड़कें नहीं थी ? यातायात के आधुनिक साधन नहीं थे, उस समय के जीवन और परिस्थितियों की जानकारी प्राप्त करना ही हमारे अतीत को जानना और पहचानना है।

गतिविधि–
प्राचीन जीवन कैसा रहा होगा ? इसके बारे में सोचें और चर्चा करें।

इतिहास के स्रोत

हमारे अतीत में जो ज्ञान के भण्डार हैं, उसका पता हमें पुरातन सामग्री, शिला–लेख आदि से चलता है। हमारे देश में विकसित नदी–घाटी सभ्यताओं की जानकारी भी हमें वहाँ खुदाई में प्राप्त टूटे भवनों, सिक्कों, बर्तनों, पत्थर व धातु के औजारों, मूर्तियों और अनेक ऐसी चीजों से मिलती हैं, जिनका हजारों वर्षों पूर्व हमारे पूर्वज उपयोग कर रहे थे। हजारों वर्ष पूर्व अनेक प्राचीन नगर, गाँव नष्ट हो गए अथवा उनके मकान धरती में समा गए। उनकी खुदाई में वे सभी चीजें निकली जो उनके काम आती थीं। यही चीजें इतिहास के स्रोत के रूप में मानी जाने लगी। इन ऐतिहासिक स्रोतों को निम्नलिखित भागों में बाँट सकते हैं–

आदिमानव

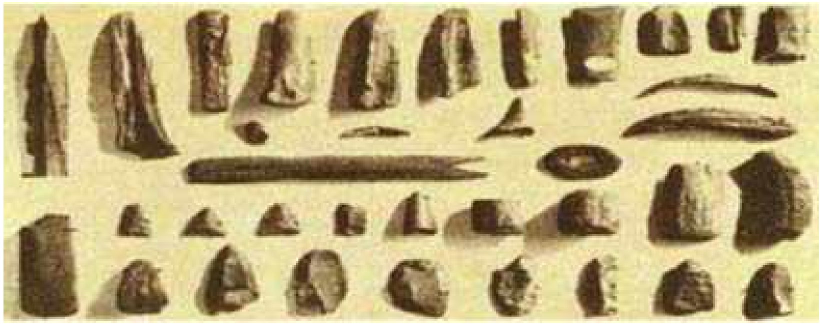
प्राचीन पत्थर के औजार

पुरातात्विक स्रोत

पुरातात्विक स्रोत वे हैं, जो पुराने हैं और पुरातत्ववेताओं द्वारा इकट्ठे किए गए हैं। पत्थर या धातु पत्र पर जो लेख उत्कीर्ण किए जाते हैं, उन्हें शिलालेख कहते हैं। प्राचीनकाल के भवन, स्मारक, किले, सिक्के, शिलालेख आदि सभी पुरातात्विक स्रोत कहलाते हैं।

साहित्यिक स्रोत

साहित्यिक स्रोत वे हैं, जो किसी भी भाषा में लिखित रूप में प्राप्त हैं। कहानियाँ, कथाएँ व किसी भाषा एवं लिपि के ग्रन्थ साहित्यिक स्रोत कहलाते हैं।

वंशावलियाँ

भाषा, लिपि, विभिन्न कलाएँ, साहित्य, इतिहास–लेखन परम्परा जैसे मूल्य संवाहकों के साथ ही वंशावली लेखन की एक अनोखी परम्परा भी हमारे पूर्वजों द्वारा विकसित की गई थी, जो इतिहास को जानने का एक सरल माध्यम हैं। जन्म से लेकर मृत्यु तक का सम्पूर्ण लेखा जोखा वंशावली लेखकों की बहियों में लिखा जाता है।

राव (बड़वा), भाट, बारोट, जागा, तीर्थ–पुरोहित (पण्डे) रानीमंगा, हेलवा, पंजीकार आदि अनेक समुदायों ने इस वंशावली लेखन द्वारा भारतीय नृवंश का सम्पूर्ण विवरण अपनी बहियों में संजोए रखा है। भारत में वंशावली लेखकों के पास हर जाति का इतिहास सुरक्षित है।

पुरालेख एवं विदेशी यात्रियों के वर्णन

ऐसे सरकारी, गैर सरकारी व व्यक्तिगत दस्तावेज जिनसे हमारे पूर्वजों के रहन–सहन एवं संस्कृति की जानकारी मिलती हो तथा भारत में आने वाले विदेशी यात्रियों द्वारा लिखे गए उनके अनुभव, जिनसे भारत के बारे में जो जानकारी मिलती हैं वे भी इतिहास के स्रोत कहलाते हैं यथा ह्वेनसांग व मेगस्थनीज के भारत संबंधी वर्णन।

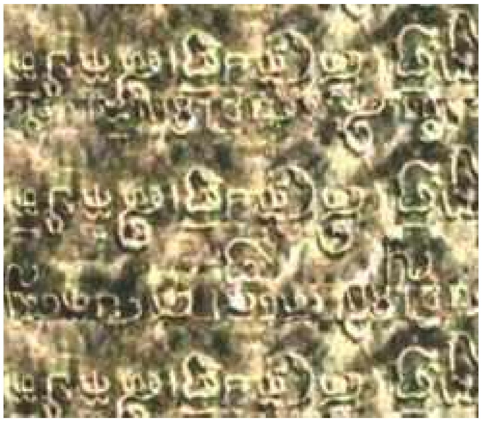

सरस्वती–सिन्धु सभ्यता से प्राप्त शिला पर उत्कीर्ण लिपि

पढ़ें एवं बताएँ :–
वंशावली लेखकों का इतिहास लेखन में किस प्रकार योगदान रहा ?

पुरा–ऐतिहासिक काल का मानव जीवन

मनुष्य के जन्म से लेकर लिपि के विकास तक का काल प्रागैतिहासिक काल अथवा पुरा–ऐतिहासिक काल कहा जाता है। वैज्ञानिकों का कहना है कि करोड़ों वर्ष पूर्व पृथ्वी की उत्पत्ति हुई है और मनुष्य की उत्पत्ति लगभग 40 लाख वर्ष पूर्व हुई होगी। विश्व के अनेक स्थानों पर मानव की खोपड़ियाँ व हड्डियाँ प्राप्त हुई हैं वे लगभग ड़ेढ़ लाख वर्ष पुरानी हैं। आज से दस हजार वर्ष पूर्व तक का काल पुरा–ऐतिहासिक काल

माना जाता है। इस काल में आदि–मानव झुण्ड बनाकर जंगलों में भोजन की तलाश में घूमता रहता था। जानवरों का शिकार करके खाना, गुफाओं में रहना, यही उसकी दिनचर्या थी। वह जंगली जानवरों के भय से गुफा के दरवाजे पर आग जला कर अपनी रक्षा करता था। पत्थर से ही आग जलाता, पत्थर के बर्तन एवं औजारों का उपयोग करता था। इसलिए इस काल को पाषाण काल या प्रस्तर का काल भी कहते हैं।

इस काल में आदिमानव घुमक्कड़ जीवन बिताता था। वह छोटे–छोटे समूहों में रहता था। समूह के नेता या मुखिया के साथ भोजन की तलाश में इधर–उधर घूमता रहता था और जब एक स्थान पर भोजन समाप्त हो जाता तब वह दूसरे स्थान पर चला जाता था।

वह पत्थरों के छोटे–छोटे टुकडे काटकर पतली धार वाले हथियार आरी, चाकू बनाकर उनका प्रयोग करने लगा। बड़े टुकड़ों से कुल्हाड़ी, हथौड़ी, वसूला आदि बनाकर लकड़ी काटने एवं अन्य उपयोग में लेने लगा। बाद में धीरे–धीरे इन्हीं पत्थर के औजारों में लकड़ी का हत्था डालकर और अच्छी तरह उपयोग में लेने लगा।

स्थायी जीवन का आरंभ

जैसे–जैसे मानव को अपने आस–पास की वस्तुओं का ज्ञान होता गया, वैसे–वैसे वह अपने लिए और अधिक सुविधाएँ जुटाने लगा। प्रारंभ में मनुष्य को कपड़े पहनने का ज्ञान नहीं था। वह पेड़ की छाल, बड़े–बड़े पत्तों एवं जानवरों की खाल से ठंड के समय अपना बचाव करता था। बाद में वह जानवरों को पालना, पौधे उगाना, अन्न पैदा करना आदि सीख गया, जिससे उसका घुमक्कड़ जीवन समाप्त हो गया और वह एक स्थान पर झोंपड़ी बनाकर रहने लगा और वहीं खेती करने लगा। उसने कुत्ते, बकरी, भेड़ आदि जानवरों को पालतू बना लिया और उनसे अपने कार्य में सहयोग लेने लगा। धीरे–धीरे मानव ने धातु की खोज की। पहले ताँबा बाद में जस्ता फिर सीसा खोजा गया। कुछ स्थानों पर ताँबे की कुल्हाड़ी मिलने से पता चला है कि पत्थर के बाद मनुष्य ने धातुओं में सर्वप्रथम ताँबे की खोज की।

स्थायी जीवन जीते हुए उसने पेड़ के मोटे तने को लुढ़कते हुए देखकर पहिया बनाना सीखा, जिससे गाड़ी बनाकर उपयोग में लेने लगा। पत्थर की चाक बनाकर मिट्टी के बर्तन बनाने लगा। गेहूँ, जौ और कपास की खेती करना, झोंपड़ी बनाकर रहना, जानवर पालना आदि कार्य सीखकर वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने लगा।

जैसे–जैसे मानव और समझदार होने लगा, वैसे–वैसे प्रकृति की उपासना, कपड़े बुनना आदि कार्य करने लगा। इस प्रकार पूर्व पाषाण काल से ताम्रकाल तक आते–आते मानव का रहन–सहन आदि पूर्व अवस्था से काफी आगे बढ़ गया था।

आओ करके देखें :

आदि मानव ने क्या–क्या सीखा, क्या–क्या खोजा व उसने क्या–क्या आकृतियाँ या उपयोगी चीजें बनाई? अपने अध्यापक की सहायता से सूची बनाएँ।

सिन्धु–सरस्वती सभ्यता

सिन्धु नदी–घाटी

आदिमानव ने जब कृषि करना, पशु पालना और अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करना सीख लिया तब छोटे–छोटे एवं कुछ बड़े गांव बसते गए। इनमें से कुछ लोग अपनी आवश्यकता से अधिक उत्पादन करने लगे व अपनी उत्पादित वस्तु दूसरों को देकर अपनी जरूरत की वस्तुएँ उनसे लेने लगे। इस प्रकार धीरे–धीरे व्यापार का प्रचलन हुआ और नगर बसने प्रारंभ हो गए। नए नगर ऐसे स्थानों पर बसे जहाँ उपजाऊ भूमि एवं पर्याप्त पानी था। अतः सिन्धु–सरस्वती के मैदानी भागों में नगर सभ्यता का विकास हुआ। सर्वप्रथम 1922 ई. में पंजाब के हड़प्पा तत्पश्चात् सिन्धु के मोहनजोदड़ो नामक स्थानों पर खुदाई में इस नगर सभ्यता का पता चला। बाद में अन्य स्थानों पर भी खुदाई करने से ऐसी ही सभ्यता व संस्कृति वाले स्थान मिले।

सिन्धु–सरस्वती सभ्यता के प्रमुख स्थल

मोहनजोदड़ो, हड़प्पा, कोटदीजी एवं चन्हूदड़ो वर्तमान में पकिस्तान में हैं। भारत के पंजाब में चण्डीगढ़ के पास रोपड़, गुजरात में लोथल व धोलावीरा, राजस्थान के हनुमानगढ़ जिले में कालीबंगा स्थल हैं, जहाँ फैली नगर सभ्यता को सिन्धु–सरस्वती घाटी सभ्यता या हड़प्पा संस्कृति कहते हैं, क्योंकि इन सभी स्थानों से प्राप्त अवशेष हड़प्पा से प्राप्त अवशेषों से मिलते–जुलते हैं। यह संस्कृति संपूर्ण सिन्ध, बलूचिस्तान पूर्वी और पश्चिमी पंजाब, उत्तर प्रदेश, गुजरात और उत्तरी राजस्थान में फैली हुई थी। भारत का मानचित्र देखने से पता चलेगा कि इस संस्कृति का भौगोलिक विस्तार बहुत बड़ा है। यह संस्कृति ईसा से 2500 वर्ष एवं वर्तमान से 4500 वर्ष पुरानी मानी जाती हैं।

सरस्वती नदी

सरस्वती नदी का भारतीय संस्कृति में महत्वपूर्ण स्थान रहा है। इसके तट पर वेदों की रचना होने का प्रामाणिक विवरण प्राप्त होता है। यह कहना उचित होगा कि वैदिक संस्कृति का जन्म इसी नदी के किनारों पर हुआ था। इस नदी का उद्‌गम स्थल शिवालिक पहाड़ी से माना जाता है। यह नदी हरियाणा ,राजस्थान में होती हुई कच्छ की खाड़ी में गिरती थी। कालान्तर में यह नदी लुप्त हो गई। वैसे प्राचीन साहित्य में इस नदी को सिन्धु नदी की माँ कहा गया है। नवीन खोजों से पता चलता है कि सरस्वती नदी घाटी पर सुसंस्कृत एवं सुव्यवस्थित सभ्यता का प्रादुर्भाव हुआ था। सेटेलाइट की तस्वीरों में इस नदी का सम्पूर्ण मार्ग स्पष्ट दिखाई देता है।

सिंधु–सरस्वती सभ्यता से प्राप्त मोहरें

सिन्धु –सरस्वती सभ्यता से प्राप्त कलाकृतियाँ

सिन्धु–सरस्वती सभ्यता का नगर नियोजन

इस सभ्यता की सबसे विशेष बात थी, यहाँ की विकसित नगर निर्माण योजना। हड़प्पा तथा मोहनजोदड़ो दोनों नगरों के अपने दुर्ग थे, जहाँ शासक वर्ग के परिवार रहते होगें। प्रत्येक नगर में दुर्ग के बाहर एक उससे निम्न स्तर का शहर था, जहां ईंटों के मकानों में नगर के अन्य लोग रहते होंगे। इन नगर भवनों के बारे में विशेष बात यह थी कि ये जाल की तरह फैले हुए थे। यानी सड़कें एक दूसरे को समकोण पर काटती थी और नगर आयताकार खंडों में विभक्त हो जाता था। ऐसा अनुमान किया जाता है कि बाढ़ या आक्रमण के समय वे गढ़ में ऊँचाई पर जा कर शरण लेते होंगे।

हड़प्पा के दुर्ग में सबसे अच्छी इमारतें धान्यागारों की थी। ये आयताकार में नदी के पास बनी होती थी। सम्भवतः नदी के रास्ते से माल नावों से लाया जाता होगा और गोदामों में रखा जाता होगा। नगर के इसी भाग में भट्टियाँ थीं जहाँ धातुकार ताँबे, काँसे, टीन आदि वस्तुएं तैयार करते होंगे।

खुदाई में सभा भवन, बाजार, चौक, स्नान कुण्ड आदि मिले हैं जो उनकी नगर नियोजन की सुव्यवस्थित योजना की जानकारी देते हैं।

भवन

नगर का जो भाग जनसाधारण के रहने के लिए था, वह योजनाबद्ध तरीके से बसाया गया था। भवन में ईंटों की मोटी दीवारें, खिड़कियाँ और दरवाजे अधिक पाए गए हैं। तेल के बड़े–बड़े मटके, रसोई के पास नाली, जानवरों को रखने के स्थान भी भवनों में पाए गए हैं। कुछ घरों में कुए भी प्राप्त हुए हैं। इससे पता चलता हैं कि घर के भीतर पानी सदैव उपलब्ध रहता था। मकानों में स्नानागार भी मिले हैं।

खुदाई से पता चलता है कि इस सभ्यता में तीन सामाजिक वर्ग रहते होंगे। एक शासक वर्ग जो दुर्ग में रहते थे, दूसरे व्यापारी जो शहर के दूसरे भाग में, तीसरे मजदूर वर्ग एवं आस–पास के किसान जो अन्न पैदा करते और गाँवों में रहते थे। खण्डहरों से पता चलता है कि वे भवन अपनी आवश्यकता के अनुरूप बनाते थे। भवन खुले, चौड़े एवं बड़े थे। घर का गन्दा पानी निकालने के लिए नाली प्रायः जमीन में दबाकर बनाई जाती थी।

सिन्धु–सरस्वती सभ्यता के पुरावशेष

सिन्धु–सरस्वती सभ्यता के सभी स्थलों की खुदाई में जो वस्तुएँ प्राप्त हुई है उनमें समानता है। उन वस्तुओं से उस समय के नागरिकों के रहन–सहन एवं जीवन स्तर का पता चलता है। प्राप्त अवशेषों के आधार पर इस नगर सभ्यता को बहुत अधिक विकसित माना जा सकता है।

आओ करके देखें–

सिन्धु–सरस्वती घाटी सभ्यता के नगर नियोजन की प्रमुख विशेषताओं की सूची बनाएँ।

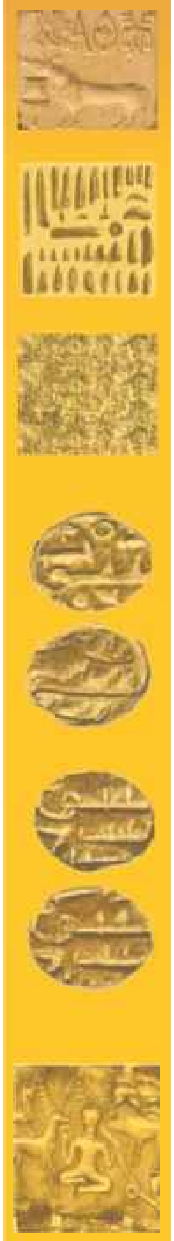

सिन्धु–सरस्वती सभ्यता का लुप्त होना

ऐसा माना जाता है कि यह संस्कृति लगभग 1000 वर्ष तक बनी रही होगी। ये नगर कैसे नष्ट हुए इसके कोई प्रमाण नहीं मिलते हैं, पर शायद बाढ़ या किसी महामारी अथवा प्राकृतिक प्रकोप, भूकम्प आदि से ये विकसित नगर समाप्त हो गए होंगे।

सिन्धु–सरस्वती सभ्यता की समकालीन विश्व सभ्यताएँ

सिन्धु –सरस्वती सभ्यता के समान ही विश्व के अन्य देशों में भी इसी प्रकार नदी–घाटियों के पास नगरों का विकास हुआ था। उनमें से कुछ नदी–घाटी सभ्यताओं को विद्वान् हमारी सिन्धु–सरस्वती सभ्यता के साथ ही विकसित होने वाली सभ्यता मानते हैं।

कुछ प्रमुख समकालीन विश्व सभ्यताएँ

1. मिश्र की नील नदी घाटी सभ्यता– अफ्रीका के उत्तर पश्चिम मिश्र क्षेत्र में नील नदी के दोनों किनारों पर यह सभ्यता फली–फूली।
2. मेसोपोटेमिया की दजला– फरात सभ्यताः–वर्तमान ईराक के दोआब (मेसोपोटेमिया) स्थान पर दजला एवं फरात नामक नदियों के भू–भाग पर यह सभ्यता विकसित हुई। इसी क्षेत्र में सुमेरिया, बेबीलोनिया और असीरिया आदि सभ्यताओं का भी विकास हुआ।
3. चीन की ह्वाङ्हो नदी सभ्यता– चीन की ह्वाङ्हो नदी के निचले हिस्से के मैदानी इलाकों में जहाँ उपजाऊ दुम्मट मिट्टी पाई जाती थी, वहाँ इस सभ्यता का विकास हुआ।

राजस्थान के प्रमुख पुरातात्विक स्थल

कालीबंगाः– राजस्थान के हनुमानगढ़ जिले में कालीबंगा नामक स्थान पर 1961 में दो टीलों की खुदाई में पुरा–ऐतिहासिक काल के अवशेष प्राप्त हुए हैं। वर्तमान घग्घर नदी के किनारे पर स्थित इन टीलों से खुदाई में जो सामग्री प्राप्त हुई है वह हड़प्पा संस्कृति से मिलती जुलती है।

आहाड़ः– उदयपुर की बेड़च नदी के किनारे पर आहाड़ नामक बस्ती ताम्र नगरी के नाम से प्रसिद्ध थी, इसी बस्ती के पूर्व दिशा में मिट्टी के टीलों पर खुदाई में पाषाण युग एवं ताम्र युग के पत्थर, ताँबे और मिट्टी के बर्तनों के अवशेष मिले है।

गिलूण्डः–उदयपुर से 95 कि.मी. उत्तर पूर्व में गिलूण्ड (राजसमन्द) नामक स्थान पर एक टीले की

खुदाई में आहाड़ के समान अवशेष प्राप्त हुए हैं। आहाड़ एवं गिलूण्ड दोनों स्थलों की सभ्यता आहाड़ संस्कृति के नाम से जानी जाती है।

बागौरः– भीलवाड़ा जिले के बागौर नामक स्थान पर कोठारी नदी के किनारे पाषाण एवं ताम्रकालीन उपकरण एवं पुरावशेष एक टीले की खुदाई में प्राप्त हुए हैं। यह बनास् संस्कृति के नाम से जाना जाता है।

बालाथलः– उदयपुर के पूर्व में 42 कि.मी. दूर वल्लभनगर के निकट बालाथल नामक गाँव में एक टीले की खुदाई में ताम्र–पाषाण कालीन बर्तन, मूर्तियाँ एवं अन्य ऐतिहासिक अवशेष प्राप्त हुए हैं। ये अवशेष भी आहाड़ संस्कृति का विस्तार है।

नोहः– पूर्वी राजस्थान के भरतपुर शहर से 5 कि.मी. दूर नोह नामक स्थान पर तांबे और हड्डियों के उपकरण, लोहे की कुल्हाड़ी इत्यादि प्राप्त हुए हैं, जो ताम्र युग के माने जाते है।

चन्द्रावतीः– (आबू–सिरोही) माउण्ट आबू की तलहटी में आबूरोड़ के निकट चन्द्रावती नामक स्थान पर ऐसे पुरावशेष प्राप्त हुए है जो प्राचीन मानव जीवन के निवास– आवास और उनके जीवन के विविध पक्षों पर जानकारी देते हैं। चन्द्रावती पुरामध्यकाल में एक अत्यन्त महत्व का स्थल था। यहाँ चल रहे उत्खनन से किले के अवशेष एवं अनाज संग्रह के कोठार मिले हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि यहाँ एक विशाल दुर्ग था। यह परमार वंश की राजधानी थी।

उत्खनन से प्राप्त वस्तुएँ

पछमताः– (राजसमंद) उदयपुर से 100 कि.मी. दूर पछमता गांव में पुरातात्विक खुदाई के दौरान पुरावशेष प्राप्त हुए हैं। यह गांव गिलूण्ड के पास है एवं आहाड़ बनास संस्कृति का एक महत्वपूर्ण स्थल है। पछमता मेवाड़ क्षेत्र की आहाड़ बनास सभ्यता से संबंधित है जो कि हड़प्पा के समकालीन है।

यहाँ कई कलात्मक वस्तुएँ जैसे नक्काशीयुक्त जार, सीप की चुड़ियाँ, टेराकोटा के मनके, शंख और जवाहरात जैसे लेपिस लेजूली (यह अर्द्ध कीमती पत्थर अफगानिस्तान के बदख्शां में पाया जाता है) नीले रंग का बहुमूल्य पत्थर, कई प्रकार के मिट्टी के बर्तन और दो भट्टियाँ या चूल्हें मिले हैं।

गणेश्वरः– सीकर जिले में काँतली नदी के तट पर इस सभ्यता स्थल से ताम्र पाषाणकाल की वस्तुएँ भारी मात्रा में प्राप्त हुई है।

बैराठः– जयपुर जिले में स्थित बैराठ विभिन्न युगों में विकसित सभ्यता स्थल रहा है। महाभारतकाल में यह मत्स्य जनपद की राजधानी था। यहाँ से सम्राट अशोक के शिलालेख भी प्राप्त हुए है।

राजस्थान में कई पूर्व –हड़प्पा एवं हड़प्पाकालीन स्थल है जैसे करनपुरा, बिजनौर और तरखान वाला डेरा। ऐसे 100 पुरास्थल मिले है, इनमें से 6 का उत्खनन हो चुका है।

आओ करके देखें–

राजस्थान में सभ्यता के नए उत्खनन स्थलों के बारे में अध्यापक की सहायता से जानकारी प्राप्त कर संगृहीत कीजिए।

शब्दावली

शिलालेख	–	पत्थर या धातु पर लिखे हुए अभिलेख
धान्यागार	–	अनाज रखने का स्थान
नृवंश	–	मानव जाति

अभ्यास प्रश्न

प्रश्न एक व दो के सही उत्तर कोष्ठक में लिखिए –

1. सिंधु घाटी सभ्यता का सबसे पहला उत्खनित स्थान कौनसा था ?
   (अ) मोहनजोदड़ो (ब) हड़प्पा
   (स) कालीबंगा (द) लोथल ( )
2. सिंधु सभ्यता ईसा से कितने वर्ष पुरानी मानी जाती है ?
   (अ) 2000 वर्ष (ब) 5000 वर्ष
   (स) 2500 वर्ष (द) 4000 वर्ष ( )
3. इतिहास को जानने के प्रमुख स्रोत कौन–कौन से है?
4. आदिमानव का जीवन कैसा था ?
5. आदिमानव के प्रमुख हथियार एवं औजार कौन–कौन से थे ?
6. क्या कारण था कि प्राचीन सभ्यताएँ नदी किनारे मैदानों में पनपी ?
7. सिन्धु–सरस्वती सभ्यता के प्रमुख स्थल कौन से हैं ?
8. सिन्धु–सरस्वती सभ्यता के नगर नियोजन पर टिप्पणी लिखिए।
9. सरस्वती–सिन्धु सभ्यता की समकालीन विश्व संस्कृतियों पर टिप्पणी लिखिए।
10. राजस्थान के प्रमुख पुरातात्विक स्थल कौन–कौन से है ? वर्णन कीजिए।

गतिविधि

1. राजस्थान के प्रमुख पुरातात्विक स्थलों के चित्रों का संकलन कीजिए।
2. विभिन्न प्रकार के पत्थरों को इकट्ठा कर यह जानें कि क्या इनसे औजार व हथियार बनाये जा सकते हैं? कुछ औजार एवं हथियार बनाकर प्रदर्शित कीजिए।

अध्याय 17

वैदिक सभ्यता एवं संस्कृति

आदि काल से ही 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना भारतीय संस्कृति की विशेषता रही है। शान्ति एवं सहिष्णुता सनातन संस्कृति के प्रमुख आदर्श रहे हैं। इन्हीं आदर्श परम्पराओं की झलक हमें वैदिक सभ्यता में देखने को मिलती है, जिसके बारे में हम इस अध्याय में जानेंगे।

वैदिक संस्कृति भारत की सनातन संस्कृति है। वैदिक संस्कृति का ज्ञान हमें वेदों तथा वैदिक साहित्य से प्राप्त होता है। वेद हमारी संस्कृति की धरोहर है। वेदों में उस समय के लोगों के रहन–सहन, जीवन,समाज व्यवस्था, परिवार व्यवस्था, व्यवसाय आदि का उल्लेख मिलता है। सबसे पहले ऋग्वेद लिखा गया। शेष तीन वेद तथा वैदिक साहित्य बाद में लिखे गए थे। वेदों को लिखे जाने के आधार पर वैदिक काल को दो भागों में बाँटा गया है–

1. पूर्व वैदिक काल 2. उत्तर वैदिक काल

गतिविधि : पढ़ें व बताएँ–

1. वैदिक संस्कृति का ज्ञान हमें कहाँ से प्राप्त होता है ?
2. वैदिक काल को कितने भागों में बाँटा जा सकता है ?
3. वसुधैव कुटुम्बकम् का क्या अर्थ है ?

ऋग्वेद के समय की सभ्यता को ऋग्वैदिक सभ्यता एवं उसके बाद वैदिक काल की सभ्यता को उत्तर वैदिक काल की सभ्यता कहते हैं।

वैदिक साहित्य–

वेद भारतीय संस्कृति के महत्त्वपूर्ण आधार है। सत्य एवं ज्ञान के बीज हमें वेदों से प्राप्त होते हैं क्योंकि समस्त ज्ञान वेदों में निहित है। वेद भारत का आदि ग्रन्थ है एवं आर्यावृत्त की प्राचीन रचनाएँ हैं। इनकी संख्या चार हैं–

1. ऋग्वेद	2. यजुर्वेद	3. सामवेद	4. अथर्ववेद

(1) ऋग्वेद– यह सबसे प्राचीन वेद है। वर्तमान में प्रचलित गायत्री मंत्र ऋग्वेद का ही एक मंत्र है।

(2) यजुर्वेद– यह ऋग्वेद से बहुत बाद में लिखा गया वेद है। इसमें यज्ञों में प्रयुक्त होने वाले श्लोक एवं मंत्र है। यह गद्य–पद्य दोनों में लिखा गया है।

(3) सामवेद– सामवेद में देवताओं की पूजा करने के सभी मंत्र शामिल है। यज्ञ के समय देवताओं की स्तुति करने के लिए जो गीत गाए जाते हैं, सामवेद में उसका संग्रह है। भारतीय संगीत में स्वर का उद्‌भव सामवेद से हुआ है। इसका कुछ भाग ऋग्वेद से लिया गया है।

(4) अथर्ववेद– इस वेद का नाम अथर्व ऋषि के नाम पर पड़ा है। इसमें चिकित्सा–विधि एवं रोगों से सम्बन्धित ज्ञान आदि संकलित है।

क्या आप जानते हैं कि वेद के चार भाग हैं–

1. संहिता 2. ब्राह्मण 3. अरण्यक 4. उपनिषद्

वैदिककालीन धर्म एवं दर्शन–

सम्पूर्ण भारतीय जीवन, दर्शन और साहित्य का आधार धर्म ही रहा है। भारतीय संस्कृति के परम् प्राण धर्म में ही विद्यमान है। धर्म के अन्तर्गत सत्य बोलना, चोरी न करना, कर्म व वचन से पवित्रता का पालन करना तथा काम–क्रोध पर नियन्त्रण, इंद्रियों पर नियत्रंण, दान–धर्म करना आदि बातें षामिल हैं। वैदिक धर्म व दर्शन केवल भारतीयों को दृष्टि में रखकर ही अपना स्वरूप प्रकट नहीं करता है बल्कि यह मानव को विश्व–मानव बनाने की योग्यता रखता है। यह दुनिया के प्रत्येक व्यक्ति के लिए उपयोगी है।

गतिविधि

अपने गुरुजी को पूछ कर बतायें निम्न प्राचीन स्थानों के वर्तमान नाम क्या है ?

1. इन्द्रप्रस्थ 2. पाटलीपुत्र 3. मिथिला 4. कौशल

अब हम वैदिक सभ्यता एवं संस्कृति की प्रमुख विशेषताओं पर चर्चा करेंगे।

वैदिक कालीन सामाजिक जीवन

वैदिक सामाजिक जीवन की प्रमुख विशेषताएँ:–

1. संयुक्त परिवार प्रथा
2. नैतिक व आध्यत्मिक शिक्षा
3. नारी का समाज में महत्त्वपूर्ण स्थान
4. जीवन में सोलह संस्कारों का महत्त्व
5. वासुधैव कुटुम्बकम् की भावना
6. आश्रम व्यवस्था

1. संयुक्त परिवार प्रथा– वैदिक काल में आर्यों का जीवन काफी सुव्यवस्थित था। समाज की मूल इकाई परिवार थी। पिता परिवार का मुखिया होता था। वैदिक काल में संयुक्त परिवारों की प्रधानता थी। माता–पिता, भाई–बहिन, चाचा–भतीजा, पुत्र–पौत्र आदि चार–पाँच पीढ़ियाँ एक ही परिवार में साथ–साथ रहती थी। संयुक्त परिवार प्रणाली के मूल में दो बातें प्रमुख थी, एक–परिवार की सम्पत्ति तथा सदस्यों की सुरक्षा, दूसरा–आजीविका। आजीविका के मुख्य साधनों यथा कृषि, पशुपालन तथा कुटीर उद्योग धन्धों में सभी का सम्मिलित योगदान होता था। इस प्रकार उनका पारिवारिक जीवन सुखी एवं शान्तिमय था। यद्यपि पुरुष परिवार का मुखिया होता था किन्तु परिवार के कार्यों में महिलाओं का महत्त्वपूर्ण स्थान था।

2. शिक्षा– वैदिक काल में शिक्षा का महत्त्वपूर्ण स्थान था। शिक्षा का आधार सादा–जीवन उच्च विचार था। गुरुकुलों में शिक्षा दी जाती थी। लड़के –लड़कियों को समान रूप से शिक्षा दी जाती थी। शिक्षा का माध्यम संस्कृत था। उस समय संस्कृत भाषा काफी उन्नत अवस्था में थी। शिक्षा का प्रधान लक्ष्य बौद्धिक व आध्यात्मिक विकास तथा आचरण की पवित्रता को विकसित करना था।

3. नारी का स्थान– वैदिक काल में समाज में स्त्रियों को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। परिवार में स्त्री को पुरुषों की तरह सभी अधिकार प्राप्त थे। सामाजिक व धार्मिक समारोहों पर वह पुरुषों के साथ भाग लेती थी।

इस काल में पर्दा प्रथा नहीं थी। लड़कियों को पढ़ाने का प्रचलन था, जिसके परिणामस्वरूप घोषा, अपाला, लोपामुद्रा, श्रद्धा आदि परम विदुषी स्त्रियाँ इस काल में हुई थी, जिन्होंने वैदिक ऋचाओं की रचना की थी। 'यत्र नार्यऽस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता'–अर्थात् जहाँ स्त्रियों का सम्मान होता है वहाँ देवताओं का निवास होता है" आदि के प्रमाण हमें वेदों के अनेक मंत्रो से प्राप्त होते हैं।

4.संस्कार– वैदिक संस्कृति में संस्कारों का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। बच्चे के जन्म, यज्ञोपवीत, विवाह, मृत्यु आदि के अवसर पर विधि–विधान से अनुष्ठान एवं संस्कारों की प्रथा प्रचलित थी। इस तरह एक व्यक्ति के जीवन में जन्म से मृत्युपर्यन्त कुल 16 संस्कारों का प्रचलन था। यज्ञ जीवन का आवश्यक अंग था। इसे स्त्री–पुरुष दोनों करते थे। अधिकांश संस्कार मंत्रोच्चार एवं यज्ञ के साथ संपन्न होते थे। बाल–विवाह उस काल में नहीं होते थे। एक पत्नी प्रथा उस समय प्रचलन में थी। आज भी हिन्दू परिवारों में इन संस्कारों को अपनाया जा रहा है।

5. वसुधैव कुटुम्बकम्– वसुधैव कुटुम्बकम् का अर्थ है– सम्पूर्ण पृथ्वी के प्राणीमात्र के एक ही परिवार का हिस्सा होने की उदात्त भावना। वैदिक काल में प्रत्येक व्यक्ति इस भावना से व्यवहार करता था– 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' जैसे अनेक मंत्र वैदिक साहित्य में पढ़ने को मिलते हैं। उस समय लोग इसके अनुरूप व्यवहार भी करते थे। मानव ही नहीं बल्कि इस धरती के प्राणी मात्र के प्रति दया भाव रखना यहाँ के सामान्य जन की विशेषता रही है।

6. आश्रम व्यवस्था– हमारा सम्पूर्ण जीवन व्यक्तिभाव से ऊपर उठकर समाज के भाव को प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील रहा हैं। व्यक्ति से समाज तक की यात्रा के पड़ाव के रूप में इन आश्रमों का निरूपण किया गया था। मनुष्य जीवन की आयु को 100 वर्ष मानकर आश्रम जीवन को चार भागों में बाँटा गया है–

1. ब्रह्मचर्य आश्रम 2. गृहस्थ आश्रम 3. वानप्रस्थ आश्रम 4. संन्यास आश्रम

(अ) ब्रह्मचर्य आश्रम– ब्रह्मचर्य आश्रम मनुष्य के जीवन का पहला भाग माना गया है। इसमें यज्ञोपवीत संस्कार से 25 वर्ष की आयु तक व्यक्ति अविवाहित रहते हुए गुरुकुल में रह कर विद्या अध्ययन करता था। ब्रह्मचर्य आश्रम में जो कुछ सीखता था, उसको वह अपने व्यवहार में उतारने का कार्य गृहस्थाश्रम में करता था।

(ब) गृहस्थ आश्रम– गृहस्थाश्रम की आयु 25–50 वर्ष तक मानी गई थी। गृहस्थ पर सम्पूर्ण समाज का दायित्व होता है। विवाह इस आश्रम का मुख्य संस्कार है। यह आश्रम अन्य सभी आश्रमों का पोषक है। ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी, एवं संन्यासियों का पोषण तो गृहस्थ ही करते थे।

(स) वानप्रस्थ आश्रम– वानप्रस्थाश्रम की आयु 50–75 वर्ष तक के बीच मानी गई है। जैसा कि शब्द से प्रतीत होता है, वानप्रस्थ आश्रम में व्यक्ति परिवार के दायित्व से मुक्त होकर अपना जीवन गाँव के निकट जंगल में बिताता था। गृहस्थ आश्रम में रहकर जो अनुभव प्राप्त किया था, उसको समाज में बाँटता था। गृहस्थ आश्रम में वह अपने परिवार के कल्याण के लिए सोचता था किन्तु यहाँ पर वह सम्पूर्ण समाज के कल्याण के लिए सोचता है। गृहस्थों को सलाह देना इस आश्रम की मुख्य विशेषता थी।

(द) संन्यास आश्रम– संन्यास आश्रम मनुष्य की आयु का 75–100 वर्ष माना गया है। वानप्रस्थ आश्रम तक की यात्रा में जब मनुष्य ज्ञान व कर्म की शिक्षा को पूर्णरूपेण प्राप्त कर लेता है तब वह उपदेश देने के योग्य हो जाता है। उपदेशक निःस्वार्थी होता है। इस काल में व्यक्ति अपना सम्पूर्ण भाग उस परम् पिता परमात्मा को सौंप कर समाज को ही अपना आराध्य मानकर जीवन के शेष 25 वर्ष समाज की सेवा के लिए समर्पित करता है। इस आश्रम में व्यक्ति एक जगह नहीं रहता बल्कि अलग–अलग स्थानों पर विचरण करता हुआ लोगों को सदाचार की शिक्षा देता था।

7. वर्ण व्यवस्था– वर्ण व्यवस्था का प्रारम्भिक स्वरूप बहुत अच्छा था। वह कर्म और श्रम के सिद्धान्त पर आधारित थी। जन्म से इसका कोई संबंध नहीं था। कर्म से कोई भी व्यक्ति ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, अथवा शूद्र हो सकता था। वर्ण व्यवस्था व्यवसाय से जुड़ी हुई थी और वर्ण विभाजन जन्मजात नहीं था। आवश्यकतानुसार कोई भी व्यक्ति अपना व्यवसाय बदल सकता था, और इसके साथ ही उसका वर्ण भी बदल जाता था। इन वर्णों में अपने खान–पान तथा वैवाहिक संबंधों पर किसी प्रकार का कोई प्रतिबन्ध नहीं था और न ही छुआछूत थी। न तो किसी वर्ण को छोटा माना जाता था और न ही अपवित्र। ऋग्वेद में एक स्थान पर एक व्यक्ति कहता है कि ''मैं मंत्र का निर्माता हूँ, मेरे पिता वैद्य है और मेरी माता पत्थर की चक्की से अन्न पीसने वाली महिला है''। इससे स्पष्ट है कि वैदिक काल में वर्ण व्यवस्था जन्म प्रधान न होकर कर्म प्रधान थी।

गतिविधि

चर्चा करें–

1. संयुक्त परिवार प्रथा की क्या विशेषताएँ थी?
2. वैदिक काल में शिक्षा का माध्यम क्या था?
3. वैदिक काल की प्रमुख विदुषी स्त्रियों के नाम बताइए ।
4. वैदिक काल में व्यक्ति के लिए कितने संस्कारों का विधान था?

वैदिककालीन राजनीतिक जीवन

आर्यों के राजनीतिक जीवन का मूल आधार कुटुम्ब था। कई कुटुम्बों को मिलाकर एक ग्राम बनता था । ग्राम के अधिकारी को 'ग्रामणी' कहते थे। कई ग्रामों के समूह को मिलाने पर 'विश' नामक इकाई बनती थी, जिसका अधिकारी 'विशपति' कहलाता था। कई विशों के समूह से 'जन' नामक इकाई बनती थी, जिसके अधिकारी को 'शासक' अथवा 'राजन्' कहा जाता था। जनों का राजनीतिक संगठन प्रायः एक जैसा था।

राजन् और उसके कार्य– राजन् राज्य का सर्वोच्च अधिकारी था। सामान्यतः राजा की मृत्यु बाद उसका पुत्र शासक बनता था अर्थात् उसका पद पैतृक था, परन्तु कभी–कभी जनता नए राजा का निर्वाचन भी करती थी। राज्य की समस्त शक्तियाँ उसके हाथों में केन्द्रित थी। वह राज्य के कर्मचारियों तथा

अधिकारियों को नियुक्त करता था तथा उन्हें पदोन्नत एवं पदच्युत भी कर सकता था। उसका निर्णय अंतिम समझा जाता था। किन्तु वह मनमानी नहीं कर सकता था। अपने मंत्रिपरिषद् से विचार – विमर्श करने के बाद वह अपनी नीति – निर्धारण कर सकता था। उसको परामर्श देने के लिये सभा तथा समिति नामक दो संस्थाएँ थीं। समिति जनता के सदस्यों का संगठन था जबकि सभा केवल मुख्य पदाधिकारियों एवं विद्वानों की बैठक थी। सभा तथा समिति को काफी प्रशासनिक अधिकार प्राप्त थे। वे राजा को पदच्युत एवं निर्वाचित कर सकती थी। वे राजा को शासन–कार्य चलाने में सहायता देती थी और उसकी शक्तियों पर अंकुश रखती थी। शक्तिशाली राजा भी इन संस्थाओं के निर्णयों की अवहेलना करने का साहस नहीं कर सकता था।

गतिविधि

हमारे देश में कानून बनाने वाली सर्वोच्च संस्थाएँ कौन–कौन सी है ? सूची बनाएँ।

वेद कालीन आर्थिक जीवन

आर्यों का आर्थिक जीवन काफी उन्नत था। उस समय लोगों की आजीविका के मुख्य साधन कृषि, पशुपालन एवं व्यापार आदि थे।

कृषि

आर्यों का मुख्य व्यवसाय कृषि था। वे जौ, गेहूँ, चावल आदि फसलें पैदा करते थे। इस काल में कृषि वर्षा पर निर्भर थी। वर्षा के अभाव में कुए तथा नहरें भी जल सिंचाई के साधन थे। खेती का काम हल व बैल से किया जाता था। अच्छी फसल के लिए खाद का प्रयोग भी किया जाता था। प्रत्येक गाँव में दो प्रकार की भूमि होती थी, प्रथम – उर्वरा एवं द्वितीय – खिल्य। उर्वरा भूमि पर फसल पैदा हो सकती थी। ऐसी भूमि पर किसी न किसी व्यक्ति का अधिकार होता था। खिल्य भूमि उसे कहते थे जो बंजर होती थी। ऐसी भूमि पर समस्त गाँव का अधिकार होता था, वहाँ पर ग्रामीण अपने पशु चराते थे।

पशुपालन

आर्यों का दूसरा मुख्य व्यवसाय पशुपालन था। उस समय आर्य लोग गाय, भैंस, भेड़, बकरी एवं घोड़ा आदि पशुओं का पालन करते थे। गाय का उनके जीवन में विशेष महत्त्व था।

शिल्प

आर्यों ने शिल्पकला में भी बहुत उन्नति की थी। वे कपड़ा अच्छा बुनते थे तथा चमड़ा रंगने एवं आभूषण बनाने की कला में भी दक्ष थे। बढ़ई लोग हल, बैलगाड़ियाँ, तख्त, चारपाई, नौकाएँ आदि बनाने में काफी निपुण थे। कुछ लोग लोहार, सुनार, कुम्हार का कार्य भी करते थे । इस समय वैद्य भी थे जो कि चिकित्सा का कार्य करते थे। इन लोगों के धन्धे के सम्बन्ध में विशेष बात यह थी कि किसी भी शिल्प को हीन नहीं समझा जाता था। शिल्पकार समाज में आदरणीय थे।

व्यापार

आर्य लोग व्यापार भी करते थे। व्यापारी वर्ग को पणि कहा जाता था। विदेशी व्यापार, जल और स्थल दोनों मार्गों से होता था। व्यापार के लिए वस्तु–विनिमय का प्रयोग होता था। ऋग्वेद के अध्ययन से

पता चलता है कि उन दिनों 'निष्क' नामक सिक्का भी प्रचलित था। स्वर्ण निर्मित इस सिक्के का प्रयोग मुद्रा के रूप में किया जाता था। उस समय वस्तुएँ ऊँटों, छकड़ों एवं घोड़ों के द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजी जाती थी।

यह भी जानें

ऋग्वेदकालीन नदियाँ

प्राचीन नाम	वर्तमान नाम
कुभा	काबुल
कुर्मुदा	कुर्रुम
गोमती	गोमल
सुवस्तु	स्वात
सिन्धु	सिन्ध
वितस्ता	झेलम
अश्किनि	चिनाब
परुष्णी	रावी
विपाशा	व्यास
षतुद्री	सतलज
द्रषद्वती	सरस्वती

शब्दावली

वैदिकसाहित्य	–	वैदिक काल में लिखा गया साहित्य
उपदेशक	–	उपदेश देने वाला
कुटुम्ब	–	परिवार

अभ्यास प्रश्न

प्रश्न एक व दो के सही उत्तर कोष्ठक में लिखिए –

1. वेदों की संख्या हैं–

(अ) दो (ब) तीन

(स) चार (द) पाँच ( )

2. सरस्वती नदी का प्राचीन नाम है–

(अ) विपाषा (ब) सिंधु

(स) गोमती (द) द्रषद्वती ( )

3. वेद कालीन दो राजनीतिक संस्थाओं के नाम बताइए।

4. वैदिक काल में परिवार प्रथा कैसी थी?

5. 'पणि' एवं 'निष्क' का क्या अर्थ है ?

6. वेदों के नाम बताइए इनमें सबसे प्राचीन वेद कौनसा है?

7. वेदकालीन शिल्पकला पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

8. वैदिक संस्कृति की विशेषताएँ लिखिए।

9. वैदिक काल की शिक्षा का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

10. वेदकालीन आश्रम व्यवस्था का वर्णन कीजिए।

11. वेदकालीन व्यापार पर टिप्पणी लिखिए।

12 वेद के भाग कौन–कोन से हैं ?

गतिविधि

1. वैदिक सभ्यता और संस्कृति के कौन–कौन से रीति–रिवाज, प्रथाएँ व संस्कार आज भी प्रचलन में है। इनकी सूची बनाइए?
2. वैदिक साहित्य की चयनित कहानियों का बालसभा में मंचन करें ।

अध्याय 18

महाजनपदकालीन भारत एवं मगध साम्राज्य

प्रारम्भ में लोग कबीले के रूप में निवास करते थे। जन समूह या कबीला जितने भू–भाग पर रहता था, वह भाग जनपद कहलाया।

जनपद का अर्थ है जनों का अर्थात् मनुष्यों का निवास स्थान

इन जनपदों की अपनी शासन और कानून व्यवस्था होती थी। इनमें से कुछ जनपद राजतंत्रात्मक थे व कुछ जनपद गणतंत्रात्मक थे।

महाजनपद

करीब 2500 साल पहले, कुछ जनपद अधिक महत्वपूर्ण हो गए। ऐसे महत्वपूर्ण एवं बड़े जनपदों ने छोटे जनपदों को अपने राज्य में मिला लिया। इस प्रकार महाजनपद बन गए। प्रत्येक महाजनपद की अपनी–अपनी राजधानी होती थी। कई राजधानियों में किलेबन्दी भी की गई थी।

महाजनपद के शासक नियमित सेना रखने लगे थे। सिपाहियों को वेतन देकर पूरे साल रखा जाता था। कुछ भुगतान सम्भवतः आहत सिक्कों के रूप में होता था। इन महाजनपदों की संख्या सोलह थी।

सोलह महाजनपदों की सर्वप्रथम जानकारी बौद्ध ग्रन्थ अंगुत्तर निकाय में मिलती है।

आहत सिक्के

मानचित्र पैमाने के आधार पर नहीं है।

सोलह महाजनपद पदों का विवरण

क्र. स.	महाजनपद का नाम	महाजनपद की राजधानी	वर्तमान शहर या स्थान जहाँ ये महाजनपद थे
1.	अंग	चम्पा	बिहार के मुंगेर –भागलपुर जिलों का क्षेत्र।
2.	मगध	पाटलिपुत्र	बिहार के गया और पटना जिलों का क्षेत्र।
3.	काशी	वाराणसी	उत्तर प्रदेश के वर्तमान के वाराणसी और उसके आसपास का क्षेत्र।
4.	कौशल	श्रावस्ती	उत्तर प्रदेश के अवध के अयोध्या फैजाबाद का क्षेत्र।
5.	वज्जि	वैशाली	गंगा नदी के उत्तर में नेपाल की पहाड़ियों तक बिहार में वैशाली का क्षेत्र।
6.	मल्ल	कुशीनारा, पावा	बिहार के पटना जिले के पास कुशीनगर एवं पावा क्षेत्र में फैला था एवं उत्तरप्रदेश के गोरखपुर एवं देवरिया जिले में।
7.	चेदि	शक्तिमती	यमुना के किनारे बुन्देल खण्ड एवं झांसी का क्षेत्र।
8.	वत्स	कौशाम्बी	उत्तरप्रदेश में इलाहाबाद का क्षेत्र।
9.	कुरु	इन्द्रप्रस्थ	दिल्ली, मेरठ और गाजियाबाद के आसपास का क्षेत्र ।
10.	पांचाल	अहिच्छत्रं, कांम्पिल्य	गंगा–यमुना के मध्य में रुहेलखण्ड, रायपुर–बरेली बदायुँ एवं फर्रुखाबाद जिले।
11.	मत्स्य	विराटनगर	राजस्थान का जयपुर, भरतपुर, और अलवर का क्षेत्र।
12.	शूरसेन	मथुरा	उत्तरप्रदेश के मथुरा, वृन्दावन एवं आसपास का क्षेत्र।
13.	अश्मक	पोतन	दक्षिण में गोदावरी नदी के तट पर फैला दोनों ओर का क्षेत्र।
14.	अवन्ति	उज्जयिनी, महिषमती	मध्यप्रदेश के उज्जैन एवं नर्मदा घाटी का क्षेत्र।
15.	कम्बोज	राजपुर	जम्मू कश्मीर, अफगानिस्तान एवं पाकिस्तान तक फैला था।
16.	गान्धार	तक्षशिला	पूर्वी अफगानिस्तान, जिसमें कश्मीर घाटी एवं तक्षशिला का भू–भाग सम्मिलित है।

प्रमुख महाजनपद

1. **मत्स्यः–** इस राज्य का विस्तार आधुनिक राजस्थान के अलवर जिले से चम्बल नदी तक था। इसकी राजधानी विराटनगर (जयपुर से अलवर जाने वाले मार्ग पर स्थित, वर्तमान नाम बैराठ) थी। महाभारत के अनुसार पाण्डवों ने यहाँ अपना अज्ञातवास का समय बिताया था।
2. **काशीः–** कई बौद्ध जातक कथाओं में इस राज्य की शक्ति और उसकी राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं के बारे में चर्चा हुई है। यह संभवतः प्रारम्भ में महाजनपद काल का सर्वाधिक शक्तिशाली राज्य था। इसकी राजधानी वाराणसी थी,जो अपने वैभव ज्ञान एवं शिल्प के लिए बहुत प्रसिद्ध थी। महाजनपद काल का अन्त होते–होते यह कोसल राज्य में विलीन हो गया।
3. **कोसलः–** इस राज्य का भू विस्तार आधुनिक उत्तरप्रदेश के अवध क्षेत्र में था। रामायण में इसकी राजधानी अयोध्या बतायी गई है। प्राचीन काल में दिलीप, रघु, दशरथ और श्रीराम आदि सूर्यवंशीय शासकों ने इस पर शासन किया था। बौद्ध ग्रन्थों में इसकी राजधानी श्रावस्ती कही गई है। बुद्ध के समय यह चार शक्तिशाली राजतन्त्रों में से एक था।

4. **अंगः–** यह राज्य मगध के पश्चिम में स्थित था। इनमें आधुनिक बिहार के मुंगेर और भागलपुर जिले सम्मिलित थे। मगध व अंग राज्यों के बीच चम्पा नदी बहती थी। चम्पा इसकी राजधानी का भी नाम था। यह उस काल के व्यापार एवं सभ्यता का प्रसिद्ध केन्द्र था। अंग और मगध के मध्य निरन्तर संघर्ष हुआ करते थे। अन्त में यह मगध में विलीन हो गया।
5. **मगधः–** इस राज्य का अधिकार क्षेत्र मोटे तौर पर आधुनिक बिहार के पटना और गया जिलों के भू प्रदेश पर था। इसकी प्राचीनतम राजधानी गिरिव्रज थी। बाद में राजगृह व पाटली पुत्र राजधानी बनी। प्रारम्भ में यह एक छोटा राज्य था, पर इसकी शक्ति में निरन्तर विकास होता गया। बुद्ध के काल में यह चार शक्तिशाली राजतन्त्रों में से एक था।
6. **वज्जिः–** यह राज्य गंगा नदी के उत्तर में नेपाल की पहाड़ियों तक विस्तृत था। पश्चिम में गण्डक नदी इसकी सीमा बनाती थी और पूर्व में संभवतः इसका विस्तार कोसी और महानन्दा नदियों के तटवर्ती जंगलों तक था। यह एक संघात्मक गणराज्य था, जो आठ कुलों से बना था। इसकी राजधानी वैशाली थी। बुद्ध और महावीर के काल में यह एक अत्यन्त शक्तिशाली गणराज्य था। बाद में मगध के शासक ने इसे अपने राज्य का एक प्रदेश बना दिया।
7. **मल्लः–** यह भी एक गणराज्य था। यह दो भागों में बँटा हुआ था। एक की राजधानी कुशीनारा (वर्तमान उत्तर प्रदेश के देवरिया जिले में आधुनिक कुशीनगर) और दूसरे की पावा थी। मल्ल लोग अपने साहस तथा युद्धप्रियता के लिए विख्यात थे। मल्ल राज्य अन्ततः मगध द्वारा जीत लिया गया।
8. **चेदिः–** यह राज्य आधुनिक बुन्देलखण्ड के पश्चिमी भाग में स्थित था। इसकी राजधानी शक्तिमती थी, जिसे बौद्ध साक्ष्य में सोत्थवती कहा गया है। चेदि लोगों का उल्लेख ऋग्वेद में भी मिलता है। महाभारत में यहाँ के राजा शिशुपाल का उल्लेख है, जिसके शासनकाल में इस राज्य ने बहुत उन्नति की। इसी समय इस वंश की एक शाखा कलिंग में स्थापित हुई।
9. **वत्सः–** यह राज्य गंगा नदी के दक्षिण में और काशी व कोसल के पश्चिम में स्थित था और इसकी राजधानी कौशाम्बी थी, जो व्यापार का एक प्रसिद्ध केन्द्र थी। कौशाम्बी इलाहाबाद से लगभग 48 किमी की दूरी पर है। बुद्ध के समय यहाँ का राजा उदयन था, जो बड़ा शक्तिशाली व पराक्रमी था। उसकी मृत्यु के बाद मगध ने इस राज्य को हड़प लिया। वत्स का राज्य भी बुद्ध के समय चार प्रमुख राजतन्त्रों में से एक था।
10. **कुरूः–** इस राज्य में आधुनिक दिल्ली के आस–पास के प्रदेश थे। इसकी राजधानी इन्द्रप्रस्थ थी, जिसकी स्मृति आज भी दिल्ली के निकट इन्द्रप्रस्थ गाँव में सुरक्षित मिलती है। यह महाभारत काल का एक प्रसिद्ध राज्य था। हस्तिनापुर इस राज्य का एक अन्य प्रसिद्ध नगर था।
11. **पांचालः–** इस महाजनपद का विस्तार (आधुनिक बदायूँ और फर्रूखाबाद के जिले) रोहिलखण्ड और मध्य दोआब में था। यह दो भागों में विभक्त था– उत्तरी पांचाल और दक्षिणी पांचाल। उत्तरी पांचाल की

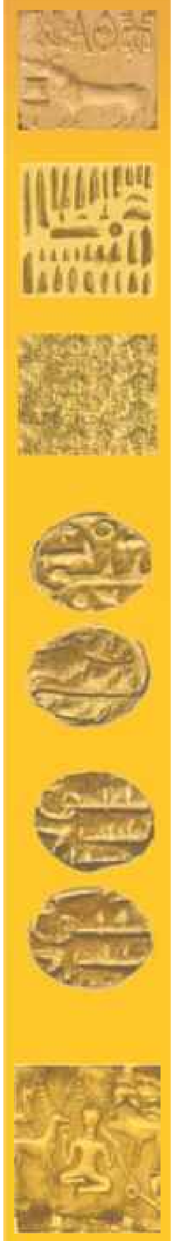

राजधानी अहिच्छत्र और दक्षिणी पांचाल की राजधानी कांपिल्य थी। यहाँ गणतंत्रीय व्यवस्था कायम थी।

12. शूरसेनः– इस जनपद की राजधानी मथुरा थी। महाभारत तथा पुराणों में यहाँ के राजवंशों को यदु अथवा यादव कहा गया है। इसी राजवंश की यादव शाखा में श्रीकृष्ण उत्पन्न हुए।

13. अश्मक :– यह राज्य दक्षिण में गोदावरी नदी के तट पर स्थित था। इसकी राजधानी पोतलि अथवा पोदन थी। बाद में अवन्ति ने इसे अपने राज्य में मिला लिया।

14. अवन्ति :– इस राज्य के अन्तर्गत वर्तमान उज्जैन का भू प्रदेश तथा नर्मदा घाटी का कुछ भाग आता था। यह राज्य भी दो भागों में बँटा था। उत्तरी भाग की राजधानी उज्जैन थी और दक्षिणी भाग की राजधानी महिष्मति थी। बुद्धकालीन चार शक्तिशाली राजतन्त्रों में से एक यह भी था। बाद में यह मगध राज्य में सम्मिलित कर लिया गया।

15. गांधार :– यह राज्य (वर्तमान पाकिस्तान के पेशावर तथा रावलपिंडी के जिले) पूर्वी अफगानिस्तान में स्थित था। इस राज्य में कश्मीर घाटी तथा प्राचीन तक्षशिला का भू प्रदेश भी आता था। इसकी राजधानी तक्षशिला थी। तक्षशिला का विश्वविद्यालय उस समय शिक्षा का प्रसिद्ध केन्द्र था।

16. कम्बोज :– इसका उल्लेख सदैव गान्धार के साथ हुआ है। अतः यह महाजनपद गान्धार राज्य से सटे हुए भारत के पश्चिमोत्तर भाग (कश्मीर का उत्तरी भाग, पामीर तथा बदख्शा के प्रदेश) में स्थित रहा होगा। राजपुर और द्वारका इस राज्य के दो प्रमुख नगर थे। यह पहले एक राजतंत्र था, किन्तु बाद में गणतंत्र बन गया।

महाजनपदों की शासन व्यवस्था

महाजनपदों में राजतन्त्रात्मक एवं गणतंत्रात्मक दोनों प्रकार की शासन व्यवस्थाओं का प्रचलन था। दोनों में मुख्य अन्तर यह था कि यहाँ राजतन्त्रात्मक शासन में शासन की सम्पूर्ण शक्ति एक व्यक्ति के हाथ में निहित होती थी और वंशानुगत शासन होता था, वहीं गणराज्यों में प्रशासन गण या समूह द्वारा संचालित होता था, जिसके प्रतिनिधि जनता से निर्वाचित होते थे।

राजा– राजा को संभवतः गणपति कहा जाता था। कुछ महाजनपदों में उसे राजा भी कहते थे। वह निर्वाचित किया जाता था। राजा अपने राज्य के लोगों की भलाई के लिए कार्य करता था।

मन्त्रिपरिषद्– यह परिषद् गणपति को शासन चलाने में सलाह देती थी। शासन की सबसे महत्त्वपूर्ण इकाई मन्त्रिपरिषद् मानी जाती थी।

परिषद्– यह वर्तमान लोकसभा के समान होती थी। गणपति और मन्त्रिपरिषद् शासन के बारे में परिषद् को जानकारी देते थे। परिषद् के सदस्यों का चुनाव जनता करती थी और यहीं पर गणपति और मन्त्रिपरिषद् के सदस्य बैठते थे।

सेना व पुलिस– गणराज्य की रक्षा के लिए सेना और सेनापति होता था। युद्ध के समय जनता सेना का साथ देती थी। बड़े–बड़े नगरों एवं राजधानी की देखभाल के लिए पुलिस व्यवस्था भी थी।

न्याय– गणराज्य में न्याय की अच्छी व्यवस्था थी। नीचे स्तर के न्यायालय द्वारा किसी को अपराधी

घोषित किये जाने पर अपने से ऊपर के न्यायालय में भेजा जाता था तथा निर्दोष पाए जाने पर छोड़ दिया जाता था। राजा न्याय का सर्वोच्च अधिकारी होता था, जो सभी न्यायालयों द्वारा अपराधी बताए जाने के बाद ही दण्ड देता था।

कर एवं आय–व्यय– महाजनपदों के राजा विशाल किले बनाते थे और बड़ी सेना रखते थे, इसलिए इन्हें प्रचुर संसाधनों एवं कर्मचारियों की आवश्यकता होती थी। अतः महाजनपदों के राजा लोगों द्वारा समय–समय पर लाए गए उपहारों पर निर्भर न रहकर अब नियमित रूप से कर वसूलने लगे। कृषि, व्यापार और व्यवसाय से कर लिया जाता था। वनों और खदानों से होने वाली आय राज्य की होती थी, इससे मन्त्रिपरिषद, सेना और पुलिस का खर्च चलाया जाता था।

समकालीन बौद्ध एवं जैन साहित्यिक स्रोतों के आधार पर जानकारी मिलती है कि भारतीय इतिहास में छठी शताब्दी ई.पू. को एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तनकारी काल माना जाता है। इस काल में प्रायः आरम्भिक राज्यों को नगरों, लोहे का प्रयोग और सिक्कों के विकास के साथ जोड़ा जाता है। इसी काल में बौद्ध तथा जैन सहित विभिन्न दार्शनिक विचारधाराओं का भी विकास हुआ है।

गतिविधि–

बौद्ध और जैन धर्म के बारे में जानकारी एकत्रित करें।

लगभग 700 ई.पू. तक लोहे का प्रयोग पहले से अधिक होने लगा था। इससे बनाए जाने वाले औजारों से कृषि तथा अन्य उत्पादन के साधनों में प्रगति हुई। यही वह समय था, जब गंगा और यमुना नदी के तट पर अनेक प्रमुख शहर बसे। इन शहरों में से इन्द्रप्रस्थ, हस्तिनापुर, कौशाम्बी तथा बनारस आज भी प्रसिद्ध नगरों में गिने जाते हैं।

सोचें एवं बताएँ–

1. लोहे के प्रयोग का कृषि उत्पादन पर क्या प्रभाव पड़ा होगा ?
2. कृषि उत्पादन बढ़ने से नगरों का विकास कैसे हुआ होगा ?

गंगा नदी के आसपास इतने सारे शहरों के होने का भी कारण था। गंगा नदी स्वयं ही एक महत्त्वपूर्ण व्यापारिक मार्ग थी और इसके द्वारा समुद्र तक पहुँचना भी संभव था। दूसरे, गंगा घाटी का जो इलाका था, वहाँ पास में ही लौह अयस्क काफी मात्रा में मिलता था। इसका फायदा उठाकर कुछ महाजनपदों ने अपना प्रभाव बहुत बढ़ाया। इनमें से एक मगध इतना बड़ा हो गया कि उसके विस्तार को 'साम्राज्य' का दर्जा दिया जाता है। यह कैसे हुआ और किस तरह हुआ था, अगले अनुच्छेद में हम यह जानेंगे।

मगध साम्राज्य का उदय

छठी शताब्दी ई.पू. में भारत में 16 महाजनपद थे। इन 16 महाजनपदों में से मगध राजनीतिक, भौगोलिक और सामरिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण था, जो अन्य महाजनपदों को अपने में विलीन कर भारत के प्रथम विशाल साम्राज्य के रूप में विकसित हुआ। छठी से चौथी शताब्दी ई.पू. में लगभग दो सौ साल के भीतर मगध

(आधुनिक बिहार) सबसे शक्तिशाली एवं महत्त्वपूर्ण महाजनपद बन गया।

मगध की महत्ता के कारण–

1. मगध के कुछ हिस्सों पर जंगल थे, जहाँ हाथियों को पकड़ा जा सकता था। हाथी सेना के महत्त्वपूर्ण अंग थे।
2. मगध चारों ओर से गंगा और सोन जैसी नदियों से घिरा हुआ था। ये नदियाँ जल यातायात, जल आपूर्ति तथा भूमि के उपजाऊपन के लिए महत्त्वपूर्ण थी। मगध क्षेत्र में खेती की उपज अच्छी होती थी। आवागमन सस्ता और सुलभ होता था।
3. मगध में लोह खनिज के भण्डार भी थे, जिनसे लोहा निकाल कर मजबूत औजारों और हथियारों का निर्माण किया जा सकता था।
4. मगध की प्रारम्भिक राजधानी गिरिव्रज थी। पहाड़ियों के बीच बसा गिरिव्रज एक किलेबन्द शहर था। बाद में मगध की राजधानी बनी। राजगृह एवं पाटलिपुत्र भी सामरिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण स्थानों पर स्थित थे। राजगृह पाँच पर्वत श्रृंखलाओं से घिरा हुआ था, जहाँ किसी भी शत्रु के लिए पहुँचना दुष्कर था तो पाटलिपुत्र गंगा और सोन से आवृत्त थी। पर्याप्त साधनों के अभाव में इन्हें पारकर इन पर अधिकार करना सहज नहीं था।

मगध के प्रमुख शासकों के नाम

हर्यक वंश	–	बिम्बिसार, अजातशत्रु
शिशुनाग वंश	–	शिशुनाग
नन्द वंश	–	महापद्मनन्द, घनानन्द

मगध साम्राज्य के उत्थान एवं समृद्धि में अजात शत्रु का बड़ा ही योगदान रहा। बाद में नन्द वंश के शासकों ने देश के लिए एक विशाल सेना संगठित कर व्यवस्थित शासन प्रणाली को जन्म दिया। उन्होंने पाटलिपुत्र को समस्त उत्तरी भारत का राजनीतिक केन्द्र बना दिया।

पाटलिपुत्र शीघ्र ही न केवल राजनीति का वरन् शिक्षा व संस्कृति का भी केन्द्र बन गया। नन्द राजाओं ने माप–तौल की नई प्रणाली भी चलाई। मगध साम्राज्य का इतना उत्थान हुआ कि लगभग एक हजार वर्ष तक मगध एक साम्राज्य के रूप में महत्त्वपूर्ण बना रहा। इसी की नींव पर आगे चल कर मौर्य साम्राज्य की स्थापना हुई।

यूनानी (ग्रीक) प्रमाणों से भी जानकारी मिलती है कि नन्द राजा का एक विस्तृत राज्य था, जिसमें कहा गया है कि सिकन्दर के समय में व्यास नदी के आगे की शक्तिशाली जातियाँ एक साम्राज्य के अधीन थी और उसकी राजधानी पाटलिपुत्र थी। नंदों के पास एक बहुत बड़ा कोष था साथ ही एक विशाल सेना थी, जिनसे भयभीत होकर सिकन्दर की सेना ने व्यास नदी से आगे बढ़ने से इन्कार कर दिया था।

नंद वंश के शासकों ने धन संचय करने और विशाल सेना को रखने के लिए अत्यधिक कर लगाए।

करों का बोझ अधिक होने से प्रजा राजा को घृणा की दृष्टि से देखती थी। परिणाम स्वरूप असन्तुष्ट वर्ग ने चन्द्र गुप्त को अपना नेता बनाया, जिसने नंद वंश को समाप्त कर प्रसिद्ध मौर्य साम्राज्य की नींव डाली।

शब्दावली

आहत सिक्के	–	प्राचीन भारतीय मुद्रा
संचय	–	इकट्ठा करना
यूनानी	–	ग्रीक (यूनान) देश के निवासी

अभ्यास प्रश्न

प्रश्न एक से चार तक के सही उत्तर कोष्ठक में लिखिए –

1. मत्स्य महाजनपद की राजधानी थी –
   (अ) विराटनगर (ब) वाराणसी (स) मथुरा (द) अयोध्या ( )
2. दक्षिणी भारत में स्थित महाजनपद था –
   (अ) मत्स्य (ब) शूरसेन (स) मगध (द) अश्मक ( )
3. सोलह महाजनपदों का सबसे पहले उल्लेख किस ग्रन्थ में मिलता है?
   (अ) अंगुत्तर निकाय (ब) ऋग्वेद (स) अथर्ववेद (द) उपनिषद् ( )
4. जनपद से क्या तात्पर्य है?
5. महाजनपद कैसे बने ?
6. महाभारत काल में राजस्थान में कौनसा महाजनपद स्थित था?
7. प्रमुख महाजनपदों के नाम लिखिए।
8. मगध के प्रमुख शासकों के नाम लिखिए।
9. महाजनपदों की शासन व्यवस्था पर टिप्पणी लिखिए।
10. मगध महाजनपद एक साम्राज्य कैसे बना ? विस्तृत रूप से बताइए।

गतिविधि–

1. महाजनपद कालीन भारत के मानचित्र में ऐसे शहरों को चिह्नित करें जो आज भी देखे जाते हैं ?
2. भारत के मानचित्र में सोलह महाजनपदों एवं इनकी राजधानियों को अंकित करें।
3. कक्षा में छात्रों के समूह बनाकर उन्हें महाजनपदों के नाम दें, फिर बताएँ कि वे कौन सा महाजनपद है?
4. वैदिक, बौद्ध व जैन साहित्य में से प्रेरक कहानियों का कक्षा में मंचन करवाएँ। ।

अध्याय 19

मौर्य एवं गुप्तकालीन भारत

प्राचीन भारत के इतिहास में मौर्यकाल का महत्वपूर्ण स्थान है। मौर्यकाल चतुर्थ शताब्दी ई.पू. से द्वितीय शताब्दी ई.पू. तक रहा। इस काल में चन्द्रगुप्त बिंदुसार एवं अशोक जैसे महान् एवं शक्तिशाली शासक हुए हैं। मौर्य साम्राज्य की स्थापना में आचार्य चाणक्य (विष्णुगुप्त) का योगदान महत्वपूर्ण था। मौर्य साम्राज्य की स्थापना के पूर्व मगध पर नंद वंश के शासक घनानंद का शासन था। घनानंद से मगध की जनता नाराज थी। उसने जनता पर बहुत अधिक अत्याचार किए थे। नंद वंश के शासन काल में भारत वर्ष के पश्चिमी भाग में छोटे–छोटे राज्य थे। सिकन्दर ने जब भारत वर्ष के पश्चिमी भाग में आक्रमण किया, तब इन छोटे राज्यों में से कुछ ने उसका सहयोग किया था। आचार्य चाणक्य सम्पूर्ण भारत वर्ष को एक सूत्र मे बाँधना चाहते थे।

आचार्य चाणक्य

आचार्य चाणक्य (विष्णुगुप्त) तक्षशिला विश्वविद्यालय के शिक्षक थे। उस समय मगध पर घनान्द नामक राजा का शासन था। प्रजा उसके राज्य से त्रस्त थी। एक बार राजा घनानंद ने अपने दरबार में आचार्य चाणक्य का अपमान कर दिया। उन्होंने तब ही इस अत्याचारी राजा के कुशासन को समाप्त करने की प्रतिज्ञा की। आचार्य चाणक्य ने एक साधारण बालक चन्द्रगुप्त को शिक्षा देकर मगध का शासक बना दिया एवं स्वयं उनके प्रधानमंत्री बनकर अपनी प्रतिज्ञापूर्ण की। आचार्य चाणक्य अर्थशास्त्र एवं राजनीतिशास्त्र के विद्वान थे। आचार्य चाणक्य ने 'अर्थशास्त्र' नामक पुस्तक लिखी। अर्थशास्त्र में मौर्यकालीन साम्राज्य की राज–व्यवस्था एवं शासन प्रणाली की जानकारी प्राप्त होती है।

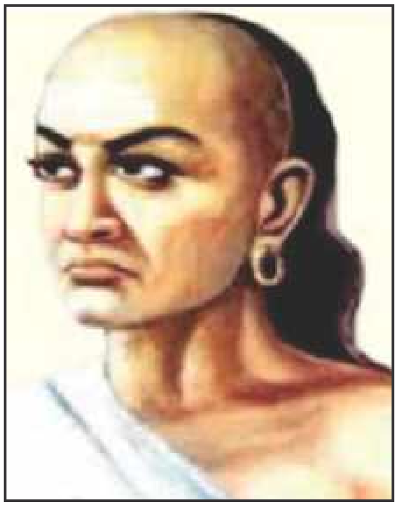
आचार्य चाणक्य

आचार्य चाणक्य एक चतुर राजनीतिज्ञ थे, इसलिए उन्हें कौटिल्य के नाम से भी जाना जाता है।

चन्द्रगुप्त मौर्य

चन्द्रगुप्त मौर्य में बाल्यावस्था से ही नेतृत्व का गुण था। वह अपने मित्रों के साथ खेल खेलते समय उनका नेतृत्व करना पसंद करता था। आचार्य चाणक्य ने चन्द्रगुप्त मौर्य के इस गुण की पहचान कर उसे भारतवर्ष का सम्राट बनाने का निर्णय किया था। चन्द्रगुप्त मौर्य 322 ई.पूर्व नंदवंश के शासक घनानंद को परास्त कर मगध का शासक बना था। तत्पश्चात् चन्द्रगुप्त मौर्य ने छोटे–छोटे राज्यों को हराकर एक विशाल साम्राज्य की स्थापना की थी। तत्पश्चात् चन्द्रगुप्त मौर्य ने सिकन्दर के उत्तराधिकारी सेल्यूकस को बुरी तरह से परास्त किया। चन्द्रगुप्त मौर्य को सेल्यूकस से कंधार, काबुल, हैरात प्रदेश एवं बलूचिस्तान का कुछ भाग प्राप्त हुआ। साथ ही सेल्यूकस की पुत्री का विवाह चन्द्रगुप्त मौर्य से हुआ। सेल्यूकस ने मेगस्थनीज को चन्द्रगुप्त के दरबार में अपना राजदूत बनाकर भेजा, जो मगध की राजधानी पाटलिपुत्र में कई वर्षों तक रहा।

मेगस्थनीज ने 'इंडिका' नामक पुस्तक भी लिखी, जिसमें मौर्यकालीन शासन व्यवस्था की जानकारी प्राप्त होती हैं। वर्तमान में इंडिका हमें अपने वास्तविक रूप में नहीं मिलती हैं, परन्तु यूनानी लेखकों ने इंडिका की कुछ घटनाओं को अपने साहित्य में स्थान दिया है।

चन्द्रगुप्त मौर्य ने जीवन के अन्तिम काल में अपने पुत्र बिन्दुसार को राज्य सौंप दिया और जैन धर्म ग्रहण कर लिया। चंद्रगुप्त ने भद्रबाहु को श्रवणबेलगोला में अपना गुरु बनाया एवं तप का मार्ग अपनाया।

बिन्दुसार

चन्द्रगुप्त के उत्तराधिकारी बिन्दुसार ने मौर्य साम्राज्य की प्रतिष्ठा को बनाए रखा। बिन्दुसार को अमित्रघात के नाम से भी जाना जाता था। आचार्य चाणक्य उसके दरबार में भी प्रधानमंत्री थे। बिन्दुसार में 272 ई.पू. तक विशाल साम्राज्य पर शासन किया। बिन्दुसार की मृत्यु के पश्चात् मौर्य साम्राज्य की बागडोर उसके सुयोग्य पुत्र अशोक के हाथ में आई।

अशोक महान्

मौर्य सम्राट अशोक अपने पिता के शासनकाल में प्रांतीय उपरत्या (प्रशासक) था, इससे उसे शासन करने का अनुभव प्राप्त हुआ। मौर्य साम्राज्य के इतिहास के संबंध में सर्वाधिक अभिलेखीय प्रमाण सम्राट अशोक के काल से प्राप्त होते हैं। सम्राट अशोक के अभिलेखों में उसका नाम 'देवानां प्रियदर्शी' राजा एवं अशोक लिखा है। अशोक 269 ई.पू. में मौर्य सम्राट बना था। तत्पश्चात् अपने तीस वर्ष के शासन काल में उसने लगभग सम्पूर्ण भारतवर्ष को अपने अधीन कर लिया था। मगध के पड़ोस में कलिंग का शक्तिशाली राज्य था, जिसे अशोक जीतना चाहता था। इस कारण अशोक ने कंलिग पर आक्रमण किया।

सम्राट अशोक

पढ़े एवं बताएँ :–

1. आचार्य चाणक्य ने प्रतिज्ञा कब की व क्यों ?
2. चन्द्रगुप्त मौर्य ने नन्दवंश के कुशासन को किस वर्ष में समाप्त किया ?
3. इण्डिका नाम पुस्तक किसने लिखी ?
4. अशोक महान् किस का पुत्र था ?

अशोक का बैराठ का शिलालेख

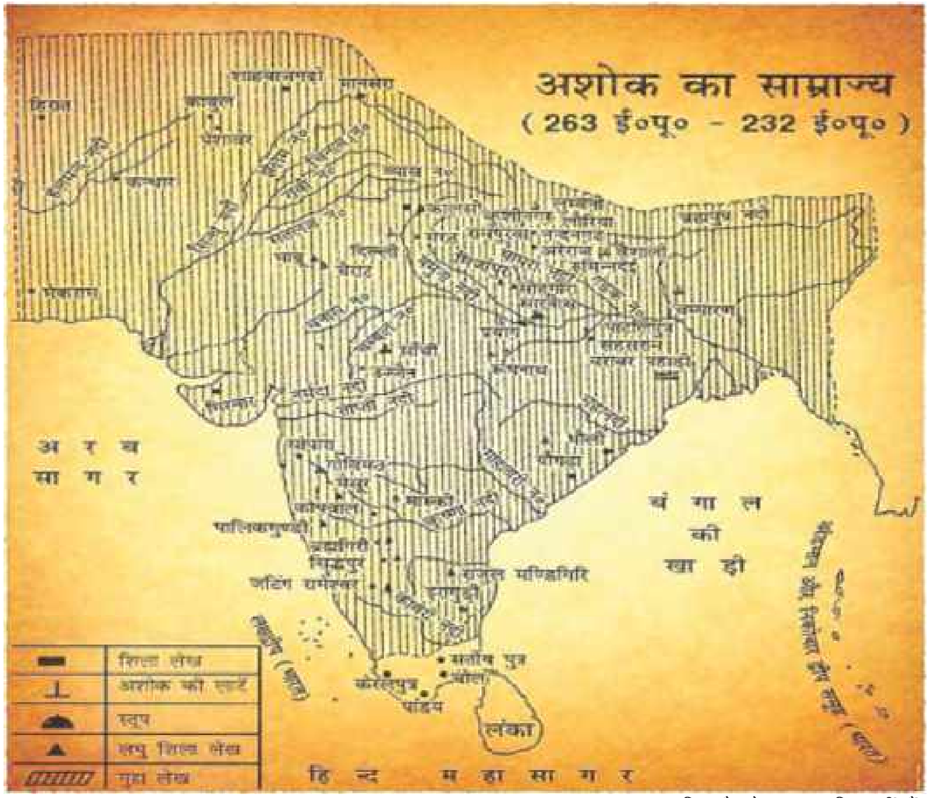

मानचित्र पैमाने पर आधारित नहीं हैं।

कलिंग विजय के नरसंहार को देखकर सम्राट अशोक ने कभी युद्ध न करने का फैसला किया था। सम्राट अशोक प्रथम शासक था जिसने अपने अभिलेखों के माध्यम से राज्य की प्रजा को संदेश पहुँचानें का प्रयास किया।

सम्राट अशोक के अभिलेख सम्पूर्ण भारतवर्ष के विभिन्न भागों में पाए जाते हैं। अशोक के अधिकतर अभिलेख प्राकृत भाषा में हैं, जो आम लोगों की भाषा थी। उत्तर–पश्चिम में कुछ अभिलेख यूनानी भाषा में है। अधिकतर अभिलेख ब्राह्मीलिपि में हैं, लेकिन अन्य लिपियों में भी कुछ अभिलेख प्राप्त होते हैं।

सम्राट अशोक की धार्मिक नीति

सम्राट अशोक स्वयं बौद्ध धर्म का अनुयायी था, परन्तु उसने सभी धर्मों के प्रति उदार नीति रखी। उसने अच्छे आचरण पर बल दिया एवं पशु वध को दण्डनीय घोषित कर दिया था।

सम्राट अशोक का एक विशाल साम्राज्य था। इस साम्राज्य में विभिन्न सम्प्रदाय के लोग रहते थे। इन लोगों के बीच सद्भाव एवं एकता बनाए रखने हेतु अशोक ने प्रजा को शिक्षा देना अपना कर्तव्य समझा। इस कार्य के लिए धम्म महामात्य नामक अधिकारियों की नियुक्ति की, जो लोगों को शिक्षा देते थे। सम्राट अशोक द्वारा प्रचारित इस नीतिगत शिक्षा को सम्राट अशोक का धम्म कहा जाता था, जिसमें जनता को अच्छा व्यवहार करने के लिए प्रेरित किया जाता था। अशोक के धम्म में दैनिक जीवन की समस्याओं को लेकर नीतिगत तरीके से रहने की बातें कही गई यथा पड़ोसियों से न लड़ो, सबसे अच्छा व्यवहार करो, दूसरे धर्म के

लोगों से टकराव न करो आदि।

बौद्ध धर्म में उत्पन्न मतभेदों को दूर करने के लिए अशोक ने पाटलिपुत्र में तृतीय बौद्ध संगीति (महासभा) का आयोजन किया। तत्पश्चात् विदेशों में धर्म के प्रचार के लिए अलग–अलग क्षेत्रों में विभिन्न धर्म प्रचारक भेजे थे, जिनका विवरण निम्नानुसार है–

प्रचारक	क्षेत्र
सोन एवं उत्तरा	स्वर्णभूमि (पेंगू)
महेन्द्र एवं संघमित्रा	सिंहल (श्रीलंका)
महारक्षित	यवन प्रदेश
रक्षित	वनवासी (उत्तरी कनाडा)

विदेशों में भारतीय संस्कृति एवं धर्म के प्रचार में सम्राट अशोक का योगदान अद्वितीय रहा है।

सम्राट अशोक के जन कल्याणकारी कार्य

सम्राट अशोक ने कलिंग युद्ध के बाद सम्पूर्ण जीवन सेवा एवं जन कल्याण में लगाया। उसने सड़कें, छायादार वृक्ष, कुएँ, धर्मशालाएँ, मनुष्यों एवं पशुओं के लिए चिकित्सालय आदि कार्य करवाए। उसने घोषणा करवाई थी, कि जनता अपने कष्ट निवारण के लिए राजा से किसी भी समय मिल सकती है। सम्राट अशोक के समय प्रजा के कष्टों में कमी आई थी तथा उनके नैतिक आचरण में वृद्धि हुई थी।

सम्राट अशोक के उत्तरवर्ती मौर्य सम्राट अयोग्य एवं दुर्बल होने से मौर्य साम्राज्य का पतन हो गया।

गुप्तकाल

मौर्य साम्राज्य के पतन के बाद भारत में शुंग, सातवाहन, कुषाण आदि वंशों का शासन रहा। कुषाण शासकों में सर्वाधिक प्रसिद्ध कनिष्क हुआ। कनिष्क का साम्राज्य भी विशाल था। चौथी शताब्दी में गुप्त राजवंश ने भारत की सत्ता संभाली। इस वंश ने लगभग 200 वर्षों तक शासन किया। गुप्त वंश के शासन काल में भारतीय सांस्कृतिक परम्परा अधिक समृद्ध हुई जिसकी शुरूआत मौर्य सम्राट चन्द्रगुप्त एवं आचार्य चाणक्य ने की थी। गुप्तवंश का प्रथम प्रतापी शासक चन्द्रगुप्त प्रथम था, जो सन् 319–320 ई. में शासक बना। उसने सम्पूर्ण भारत को एक सूत्र में बाँधकर विशाल साम्राज्य की स्थापना की। वह एक कुशल प्रशासक कला एवं साहित्य का संरक्षक और उदार शासक था।

समुद्रगुप्त

चन्द्रगुप्त प्रथम के बाद उसका सुयोग्य पुत्र समुद्रगुप्त मगध का शासक बना। समुद्रगुप्त की माता का नाम कुमार देवी था। समुद्रगुप्त न केवल गुप्तवंश का बल्कि संपूर्ण प्राचीन भारतीय इतिहास के महानतम शासकों में से एक था। वह पराक्रमी, वीर एवं विद्वान् था। राजा बनते ही उसने उत्तर भारत के सभी शासकों को पराजित कर दक्षिण एवं पूर्वोत्तर में भी अपना राज्य विस्तृत किया। समुद्रगुप्त ने भारत के विशाल भू–भाग को जीतकर अश्वमेध यज्ञ किया और उसकी स्मृति में अश्व के चित्र अंकित सोने के सिक्कें चलाए।

समुद्रगुप्त

समुद्रगुप्त का शासन काल राजनैतिक एवं सांस्कृतिक दोनों रूप से गुप्त साम्राज्य के उत्कर्ष का काल माना जा सकता है। उसके दरबार में अनेक कलाकार एवं विद्वान् थे। हरिषेण उसका मंत्री एवं लेखक था, जिसने 'प्रयाग प्रशस्ति' की रचना की थी। 'प्रयाग प्रशस्ति' से समुद्रगुप्त के विजय अभियानों की जानकारी प्राप्त होती है। समुद्रगुप्त स्वयं एक महान् संगीतज्ञ था, जिसे वीणा वादन का शौक था। वह प्रजापालक एवं धर्मनिष्ठ शासक था, जिसने वैदिक धर्म एवं परंपराओं के अनुसार शासन किया था।

चन्द्रगुप्त द्वितीय (विक्रमादित्य)

समुद्रगुप्त के बाद चन्द्रगुप्त द्वितीय शासक बना। वह अपने पिता समुद्रगुप्त की तरह योग्य एवं प्रतिभाशाली था। उसे कला, विद्या के संरक्षक एवं अद्वितीय योद्धा के रूप में सर्वाधिक स्मरण किया जाता है। उसने शक एवं कुषाण शासकों को परास्त किया था। चन्द्रगुप्त द्वितीय का साम्राज्य भी भारत वर्ष के बहुत बड़े भाग पर विस्तृत था। विजय अभियानों के बाद उसने विक्रमादित्य की उपाधि धारण कर विक्रम संवत् चलाया था।

चन्द्रगुप्त द्वितीय (विक्रमादित्य)

चन्द्रगुप्त द्वितीय युद्ध क्षेत्र में जितना वीर (रणकुशल) था, शान्तिकाल में उससे कहीं अधिक कर्मठ था। वह स्वयं विद्वान् था एवं विद्वानों का आश्रयदाता था। उसके दरबार में नौ विद्वानों की एक मंडली थी, जिन्हें नवरत्न कहा गया है।

विक्रमादित्य के दरबार के नौ रत्न		
महाकवि कालिदास	धन्वन्तरि	क्षपणक
अमरसिंह	शंकु	वेताल भट्ट
घटकर्पर	वराहमिहिर	वररूचि

चीनी यात्री फाह्यान चन्द्रगुप्त द्वितीय के शासन काल में भारत आया था। फाह्यान ने चन्द्रगुप्त द्वितीय के शासन के बारे में लिखा है, कि ''उसकी प्रजा सुखी है। राजा न तो शारीरिक दण्ड देता है और न ही प्राण दण्ड। चाण्डालों के अलावा कोई माँस एवं मदिरा का सेवन नहीं करता है। लोग घरों में ताले भी नहीं लगाते हैं''। चन्द्रगुप्त द्वितीय का शासन काल प्रजा के लिए सुखमय एवं सम्पन्नता भरा था।

गुप्त काल में प्रजा सुखी थी। राजा दयावान थे। धन वैभव की कोई कमी नहीं थी। चारों और समृद्धि एवं उन्नति का बोलबाला था। सोने के सिक्के प्रचलन में थे। इस काल में कला व साहित्य के क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति हुई थी, इसलिए गुप्तवंश का शासन काल भारतीय इतिहास का स्वर्ण युग माना जाता है।

शब्दावली

देवानां प्रियदर्शी – देवताओं का प्रिय (अशोक की उपाधि)

ब्राह्मी लिपि – एक लिपि का नाम (वर्तमान की देवनागरी लिपि इसी से निकली है)

अश्वमेध यज्ञ – प्राचीनकाल में शक्तिशाली शासकों द्वारा किया जाने वाला यज्ञ।

अभ्यास प्रश्न

प्रश्न एक से तीन तक के सही उत्तर कोष्ठक में लिखिए –

1. आचार्य चाणक्य किस विश्वविद्यालय का शिक्षक था ?

   (अ) नालन्दा (ब) तक्षशिला

   (स) बनारस (द) विक्रमशिला ( )

2. मेगस्थनीज किसका राजदूत था ?

   (अ) सिकन्दर (ब) सेल्यूकस

   (स) चन्द्रगुप्त मौर्य (द) सम्राट अशोक ( )

3. विक्रमादित्य की उपाधि किस शासक ने धारण की थी ?

   (अ) सिकन्दर (ब) चन्द्रगुप्त द्वितीय

   (स) चन्द्रगुप्त मौर्य (द) सम्राट अशोक ( )

4. अर्थशास्त्र नामक पुस्तक किसने लिखी थी ?
5. अमित्रघात किस मौर्य सम्राट का नाम था ?
6. मगध की राजधानी का क्या नाम था ?
7. चीनी यात्री फाह्यान किसके शासन काल में भारत आया था ?
8. सम्राट अशोक का धम्म क्या था ?
9. चन्द्रगुप्त द्वितीय के नवरत्न कौन–कौन थे ?
10. चीनी यात्री फाह्यान ने गुप्त साम्राज्य के बारे में क्या लिखा है ?
11. सम्राट अशोक ने लोक कल्याण के लिए कौन–कौन से कार्य किए थे ?
12. गुप्तकाल को भारतीय इतिहास का स्वर्ण युग क्यों कहा जाता है ?
13. समुद्रगुप्त के व्यक्तित्व पर लेख लिखिए।

गतिविधि

आपके आस–पास के क्षेत्र का भ्रमण करें एवं वहां स्थित शिलालेखों की जानकारी प्राप्त कर फाईल बनाएँ ।

अध्याय 20

प्राचीन भारत की अर्थव्यवस्था

बच्चों! आपने यह तो सुना ही होगा कि भारत कभी सोने की चिड़िया रहा है। आपने कभी सोचा है कि इसे 'सोने की चिड़िया' क्यों कहते हैं? प्राचीन भारत में उद्योग एवं व्यापार अपने चरमोत्कर्ष पर थे। अपने देश में निर्मित वस्तुओं की किस्म अच्छी होने के कारण उसकी विदेशों में बहुत माँग रहती थी। इससे यहाँ का बहुत–सा माल विदेशों में निर्यात किया जाता था। निर्यात के बदले मुद्रा के रूप में सोना व चाँदी लिया जाता था। भारत में ही अच्छे माल की उपलब्धता के कारण अपने देश को अन्य देशों से माल आयात नहीं करना पड़ता था। इससे विदेशों से प्राप्त सोना–चाँदी भारत में ही रहता था। दुनिया भर का सोना भारत में एकत्र होने लगा। धीरे–धीरे यहाँ पर सोने के भण्डार बढ़ने लगे। भारत अन्य देशों के मुकाबले सम्पन्न होने लगा। यही कारण था कि उस समय के भारत को 'सोने की चिड़िया' कहा जाने लगा।

इस पाठ में हम पढेंगे कि प्राचीन काल में भारत के उद्योग धन्धे व व्यापार विकसित थे। किन–किन देशों के साथ हमारे व्यापारिक सम्बन्ध थे और अंग्रेजों ने किस तरह से हमारी उन्नत अर्थव्यवस्था को तहस–नहस कर दिया? मुगल शासन के अन्त में एवं ब्रिटिश शासन की शुरुआत के समय भारत की अर्थव्यवस्था यूरोप की अर्थव्यवस्था से कई मायनों में अच्छी थी। आईये, हम इस सम्बन्ध में अध्ययन करें।

गतिविधि

मित्रों के साथ चर्चा करें–

प्राचीन भारत को सोने की चिड़िया क्यों कहा जाता है ?

कृषि की स्थिति

प्राचीन भारत में कृषि एवं संबंधित कार्य लोगों का मुख्य व्यवसाय था। यहाँ के गाँव समृद्ध थे। माना जाता है कि खेती करने की तकनीक दुनिया ने भारत से सीखी। भारतीय किसानों ने गेहूँ की खेती इंग्लैण्ड व यूरोप से कई शताब्दी पूर्व प्रारम्भ की थी। अंग्रेज जब भारत आये तो यहाँ के कृषि विकास को देखकर आश्चर्य चकित थे।

> इंग्लैण्ड में सामान्य रुप से प्रचलित धारणा जिसे भारत में अक्सर व्यक्त किया जाता है कि भारतीय कृषि पुराने ढंग की व पिछड़ी है, पूरी तरह गलत है। भारतीय किसान औसत अंग्रेज किसान की तरह अच्छा है और कुछ मायने में तो उससे भी श्रेष्ठ है। **–डॉ. वॉयलेकर 1889 ई.**

जितने अच्छे ढंग से यहाँ का किसान खेती को खरपतवार से साफ रखता था, मिट्टी, फसल की बुआई और कटाई के बारे में जानकारी रखता था, वह अन्यत्र देशों में देखने को नहीं मिलता था। यही कारण है कि यहाँ की कृषि अन्य देशों की तुलना में बहुत उन्नत अवस्था में थी। जनता के लिए धन–धान्य व उद्योगों के लिए कच्चा माल यहाँ की कृषि से पर्याप्त मात्रा में मिल जाता था। चीनी, नमक, चाय, अफीम, कपास, मसाले, नील, रेशम आदि का उत्पादन अच्छी मात्रा में होता था एवं विदेशों में इनकी माँग रहती थी। यहाँ कपास व गन्ने की खेती भी पर्याप्त मात्रा में की जाती थी।

गतिविधि

1. प्राचीन काल के कृषि उत्पादों की सूची बनाइये।
2. ''भारतीय किसान कुछ मायने में एक औसत अंग्रेज किसान से भी अच्छा है।'' यह वाक्य किसने कहा? उसके कारणों पर चर्चा करें।

उद्योग

यद्यपि भारत की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान थी, फिर भी उस समय इस देश में उद्योगों का विकास हो चुका था। अब तो लगभग सभी लोग मानते हैं कि भारत में अंग्रेजों के आने से पहले यहाँ के उद्योगों के विकास का स्तर यूरोप में हुए औद्योगिक विकास के स्तर से ऊँचा था। उस समय भारत में दो तरह के उद्योग प्रचलित थे –(1) गाँवों में स्थापित कुटीर उद्योग एवं (2) शहरों में स्थापित बड़े उद्योग। ग्रामीण उद्योग बहुत छोटे पैमाने पर कार्य करते थे तथा वे स्थानीय माँग को पूरा करते थे। नगरों में स्थापित उद्योग विस्तृत बाजारों की माँग को पूरा करते थे। पानी के जहाज बनाने की कला में भारत यूरोप से आगे था। ईसा की उन्नीसवीं सदी के प्रारम्भ तक जहाज बनाने का उद्योग इंग्लैण्ड की अपेक्षा भारत में अधिक विकसित था। यहाँ के जहाज न केवल गुणवत्ता की दृष्टि से बल्कि माल ढोने की क्षमता की दृष्टि से भी उन्नत अवस्था में थे।

भारतीय औद्योगिक आयोग की रिपोर्ट 1916

जिस समय आधुनिक औद्योगिक व्यवस्था के उद्‌गम, पश्चिमी यूरोप में असभ्य जातियाँ निवास करती थी, भारत अपने शासकों के वैभव तथा शिल्पकारों की उच्च कोटि की कला हेतु विख्यात था।

बंगाल पर अंग्रेजों की विजय से पहले 1750 ई. के आस–पास भारत पूरी दुनिया में कपड़ा उत्पादन के क्षेत्र में अग्रणी देश था। भारतीय कपड़े अपनी गुणवत्ता व बारीक कारीगरी के लिए दुनिया में मशहूर थे। दक्षिणी–पूर्वी एशिया (जावा व सुमात्रा आदि) तथा पश्चिम एवं मध्य एशिया में इन कपड़ों की भारी माँग थी।

गतिविधि

नक्शा देखकर नोट बुक में लिखें–

- सफेद कपड़े का उत्पादन कहाँ पर होता था?
- चेक और धारीदार कपड़े का उत्पादन कहाँ–कहाँ होता था ?
- शिंट्ज (छींट छापेदार सूती कपड़े) के केन्द्र कौन–कौन से हैं ?
- सिल्क का उत्पादन भारत में कहाँ–कहाँ पर होता था ?

मानचित्र पैमाने पर आधरित नहीं है

महरौली का लौह स्तम्भ

कपास और रेशम के महीन कपड़े, विशेष कर ढाका की मलमल की साड़ी दुनिया में माँग रहती थी। बंगाल के सूती कपड़े यूरोपीय कम्पनियों द्वारा भारी मात्रा में बाहर भेजे जाते थे। बंगाल सूती व रेशमी वस्त्र उद्योगों का मुख्य केन्द्र था। बंगाल के बाहर लखनऊ, अहमदाबाद, नागपुर और मथुरा सूती उद्योगों के महत्वपूर्ण केन्द्र थे। पीतल, ताम्बे और कांसे की वस्तुओं का उत्पादन सर्वत्र किया जाता था। सोने व चाँदी के आभूषण, रत्न व्यवसाय, संगमरमर हाथीदाँत और शीशे पर कलापूर्ण कार्य आदि अन्य महत्वपूर्ण उद्योग थे। लोहा उद्योग उन्नीसवीं शताब्दी में काफी विकसित था। 'विल्सन' ने अपने एक वक्तव्य में कहा था कि ''भारतीयों को अनादि काल से लोहे को गलाने की कला का ज्ञान रहा है।'' दिल्ली (महरौली) में कुतुबमीनार के परिसर में खड़ा लौह स्तम्भ लगभग 1500 वर्ष पूर्व बनाया गया था। आश्चर्य की बात है कि इतने वर्षों बाद भी इसमें जंग नहीं लगा है। ईसवाल (उदयपुर) में मौर्यकालीन लोह प्रगलन भट्टियों के अवशेष प्राप्त हुए हैं।

व्यापार

अंग्रेजों के भारत आगमन से पहले हमारा राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार बहुत समृद्ध था। भारत दूसरे देशों के साथ व्यापार ईसा से 2000 वर्ष पूर्व भी करता रहा है। मिश्र में 'मम्मीज' को भारतीय मलमल में लपेटकर रखा गया है, जो इस बात का सबूत है कि प्राचीन काल में मिश्र भारत से कपड़े का आयात करता था। यूनान में ढाका की मलमल 'गंगेतिका' नाम से बिकती थी। इसी तरह रोम में भी भारत में बनी चीजों की भारी खपत थी। मध्यपूर्व के देशों में रेशमी कपड़ों, जरी के काम, कीमती पत्थरों और धातु की बनी वस्तुओं की माँग सदैव रहती थी। चूंकि ये देश उस समय औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े थे, इसलिए भारत उनसे आयात नहीं करता था। भारतीय व्यापारियों को निर्यात के बदले में अक्सर सोना और चाँदी मिलता था, जिसका अर्थ है कि सोने का देश के भीतर की ओर प्रवाह। देश की समृद्धि का यह मुख्य कारण बना। पहली सदी में 'प्लिनी' नामक लेखक ने शिकायत की थी कि भारतीय सामग्री के प्रयोग के कारण रोमन साम्राज्य से सोना बाहर की ओर खिंचता चला जा रहा है।

धातु की बनी वस्तु

गतिविधि

चर्चा करें–प्राचीन काल में भारत विदेशों से माल का आयात बहुत ही कम करता था। क्यों ?

प्राचीन काल में व्यापार :– व्यापार की दृष्टि से हम इस कार्य को दो भागों में बाँट सकते हैं –

(1) देशी व्यापार तथा (2) विदेशी व्यापार

देशी व्यापार में व्यापार का कारोबार देश की सीमाओं के भीतर किया जाता है तथा विदेशी व्यापार में यह कारोबार एक देश से दूसरे देश के बीच में किया जाता है। देशी व्यापार को घरेलू व्यापार भी कहते हैं।

अब हम देशी व विदेशी व्यापार तथा उसके व्यापारिक मार्गों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करेंगे।

प्राचीन भारत में देशी व्यापार के व्यापारिक पथ

देशी व्यापार के लिए प्राचीन भारत में दो प्रमुख मार्ग थे – (1) उत्तरा पथ (2) दक्षिणा पथ। इसका उल्लेख महाभारत एवं बौद्ध तथा जैन ग्रन्थों में भी मिलता है। उत्तरा पथ भारत के उत्तरी के भागों को जोड़ता है तथा दक्षिणा पथ भारत के दक्षिण के हिस्सों को जोड़ता है। उत्तरापथ ताम्रलिप्ति (बंगाल का पश्चिमी क्षेत्र) से शुरु होता था तथा पाटलीपुत्र, वैशाली, कुशीनगर, श्रावस्ती से होता हुआ वर्तमान उत्तरप्रदेश के हस्तिनापुर से गुजरता था। यहाँ से पंजाब–दिल्ली होते हुए हिमालय की तलहटी से गुजरता था। आगे यह कश्मीर घाटी को छूते हुए पंजाब में तक्षशिला होते हुए पुष्कलावती (वर्तमान पेशावर–पाकिस्तान) को पार करते हुए अफगानिस्तान को जाता था। अफगानिस्तान से यह रास्ता काबुल को पार करता हुआ एशिया में बल्ख तक पहुंचता था। पंजाब से एक रास्ता सिंध को भी जाता था।

प्राचीनकाल में विंध्य पर्वतमाला के दक्षिणी भाग को दक्षिणा पथ के नाम से जाना जाता था। इस तरह दक्षिणा पथ एक रास्ते का नाम भी था और एक भू–भाग का भी। दक्षिणा पथ दो दिशाओं में जाता था। एक दिशा महाराष्ट्र में गोदावरी नदी के तट पर बसे शहर पैठण से बिहार के मुख्य शहरों की तरफ जाता था। दूसरी दिशा में पैठण से पश्चिमी समुद्री तट की तरफ से गुजरता हुआ मध्यप्रदेश में नर्बदा के तट पर महेश्वर व उज्जैन को पार करता हुआ आगे वह गोनाद्धा (गोंडों का प्रदेश) से निकलकर भिलसा, कोसम, साकेत (अयोध्या), श्रावस्ती, सेताण्या, कपिलवस्तु, पावापुरी, भोग्नगारा, वैशाली और राजगृह होते हुए जाता था। दक्षिणा पथ अनेक पहाड़ी श्रृंखलाओं से होकर गुजरता था। इन पहाड़ों पर रहने के लिए व्यापारियों ने अनेक गुफाएँ बना ली थी।

व्यापार सड़क और नदी के रास्ते होता था। नावों के भी काफिले चलते थे। चम्पा और मिथिला से व्यापारी नावों में सामान लादकर ताम्रलिप्ति (बंगाल) ले जाते थे।

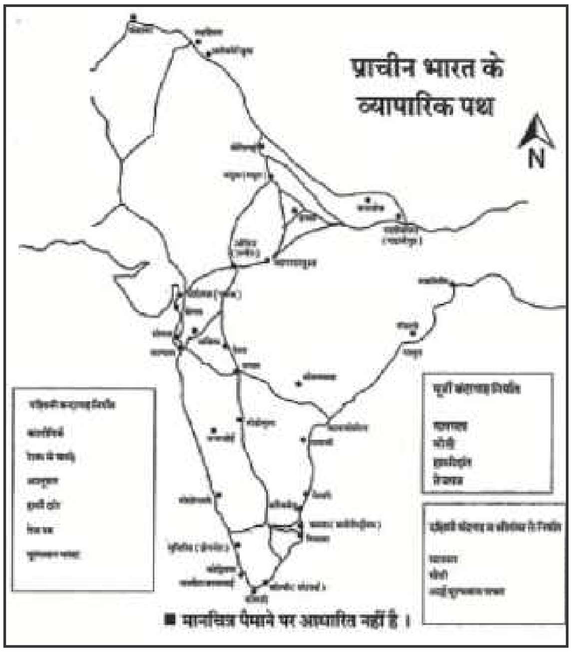

पढ़े एवं बताएँ :–

1. उतरापथ व दक्षिणापथ किसे कहते हैं?
2. देशी व विदेशी व्यापार में क्या अन्तर है?
3. एशिया के बल्ख तक पहुँचने के लिए मार्ग कहाँ से होकर जाता था?

प्राचीन भारत में विदेशी व्यापार

हम यह पढ चुके हैं कि औद्योगिक दृष्टि से भारत उन्नीसवीं सदी के प्रारम्भ तक बहुत ही अधिक उन्नत अवस्था में था। यहाँ के शिल्पकार न केवल स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति करते थे बल्कि पर्याप्त मात्रा में यहाँ से वस्तुओं का निर्यात भी करते थे। मलमल, छींट, जरी के वस्त्र, लोहे व इस्पात की वस्तुएँ, तम्बाकू, नील, शॉल, रेशम व रेशमी वस्त्र एवं गरम मसालों का भारत से काफी मात्रा में निर्यात किया जाता था। इसके बदले विदेशी व्यापारी हमें जवाहरात, सोना तथा चाँदी देते थे।

इस बात के पर्याप्त सबूत हैं कि प्राचीन काल में भारत का विदेशी व्यापार दुनिया के अनेक देशों से था। जिसमें मुख्य है – बेबीलोन, मिश्र, जावा, सुमात्रा, रोम, आदि।

मध्य भारत के जंगलों से जहाज बनाने के लिये लकड़ी निर्यात की जाती थी। खेतड़ी (राजस्थान) की खदानों से ताम्बा भेजा जाता था। मेवाड़ से जस्ता भेजा जाता था। हीरे, जवाहरात, रेशम के कपडे व अन्य जवाहरात रोम भेजे जाते थे। काली मिर्च की यूरोप में बहुत माँग थी। फारस की खाड़ी के दक्षिणी तट पर स्थित नगर ताम्बा, चन्दन तथा सागवान खरीदते थे।

प्राचीन विदेशी व्यापारिक मार्ग

इथोपिया (अफ्रीका) से हाथी–दाँत व सोना भारत आता था। बाहर से हमारे देश में आयात होने वाली सूची में घोड़े प्रमुख थे। तीसरी ईस्वी सदी जब रोम का साम्राज्य कमजोर पड़ने लगा तो भारत के व्यापारी पूर्वी एशिया से ज्यादा व्यापार करने लगे। सुवर्णदीप, कम्बोज आदि स्थानों पर भारतीय बस्तियाँ बसने लगी। चीनी लेखकों ने हिन्द–चीन व हिन्देशिया में भारतीय व्यापारियों की बस्तियों का उल्लेख किया है। पूर्व में कलिंग देश के व्यापारी भी पूर्वी एशिया में जाते थे।

प्राचीनकाल में अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में भारत के रेशमी व सूती उत्पादों का ही दबदबा था। आर्मिनियन और फारसी सौदागर पंजाब से अफगानिस्तान, पूर्वी फारस और मध्य ऐशिया के रास्ते यहाँ की चीजें लेकर जाते थे। यहाँ के बने महीन कपड़ों के थान ऊँटों की पीठ पर लादकर पश्चिमोत्तर सीमा से पहाड़ी दर्रों और रेगिस्तान के पार ले जाते थे। गुजरात के तट पर स्थित सूरत बन्दरगाह के जरिये भारत खाड़ी और लाल सागर के बन्दरगाहों से जुड़ा हुआ था। कोरोमंडल तट पर मच्छलीपट्टनम् और बंगाल में हुगली के माध्यम से दक्षिणी–पूर्वी एशियाई बन्दरगाहों के साथ खूब व्यापार चलता था ।

भारत का विदेशी व्यापार मुख्यतः भू–मार्ग से तथा हिन्द महासागर–अरबसागर के रास्ते समुद्री मार्ग से अरब देशों तक होता था। विदेशी व्यापारियों द्वारा समुद्री रास्ते की खोज के बाद तो अनेक पाश्चात्य जगत् की कम्पनियाँ भारत के साथ व्यापार करने लगी, जिसमें मुख्यतः फ्राँस, डच एवं ब्रिटिश कम्पनियाँ थी।

आयात–निर्यात किसे कहते हैं ?

विदेशी बाजारों से माल खरीदने को माल का आयात करना कहते हैं तथा विदेशी बाजारों में अपने देश के माल को बेचना निर्यात कहलाता है।

गतिविधि

ऐसी वस्तुओं की सूची बनाइए जिसमें प्राचीन काल में भारत की वस्तुओं की विदेशी बाजारों में माँग रहती थी।

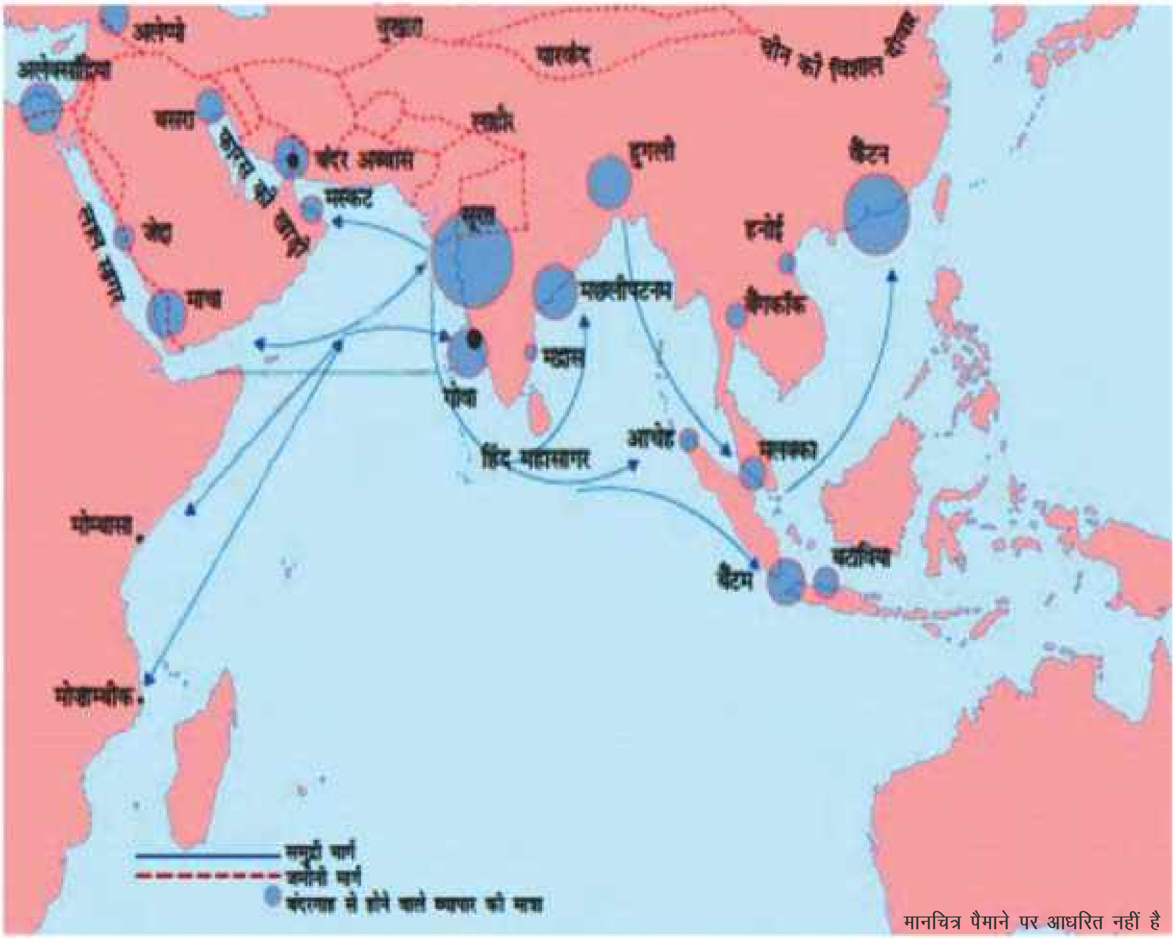

भारत को शेष विश्व से जोड़ने वाले व्यापारिक मार्ग

> **गतिविधि**
>
> उपरोक्त मानचित्र देख कर बताएं कि भारत को शेष विश्व से जोड़ने वाले जल व थल के व्यापारिक मार्ग कौन–कौन से थे?

शब्दावली

लौह प्रगलन भट्टियाँ	–	लोहा गलाने की भट्टियाँ
काफिला	–	समूह
सुवर्ण द्वीप	–	वर्तमान सुमात्रा

अभ्यास प्रश्न

1. यह कथन किसने कहे ?

   (1) भारतीय किसान एक औसत अंग्रेज किसान की तरह अच्छा है और कुछ मायनों में तो इससे भी श्रेष्ठ।

   (2) जिस समय पश्चिम यूरोप में असभ्य जातियाँ निवास करती थी, भारत अपने शासकों के वैभव तथा शिल्पकारों की उच्च कोटि की कला के लिए विख्यात था।

   (3) भारतीय सामग्री के प्रयोग के कारण रोमन साम्राज्य से सोना बाहर की ओर जा रहा है।

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (कोष्ठक में दिए शब्दों की सहायता से)

   (गेंहूँ , पानी का जहाज, हाथीदान्त व सोना, सोना व चाँदी, ईसवाल (उदयपुर))

   (1) यहाँ का बहुत सा माल विदेशों में निर्यात किया जाता था तथा निर्यात के बदले मुद्रा के रुप में .... लिया जाता था।

   (2) .... की खेती यहाँ पर इंग्लैण्ड व यूरोप से कई शताब्दी पूर्व प्रारम्भ की थी।

   (3) .... बनाने की कला में भारत यूरोप से आगे था।

   (4) .... में मौर्यकालीन लोह प्रगलन भट्टियों के अवशेष प्राप्त हुए है।

   (5) ईथोपिया (अफ्रीका) से .... भारत आता था।

3. प्राचीन काल में भारत से कौन–कौन सी वस्तुएँ निर्यात की जाती थी ?

4. देशी व विदेशी व्यापार किसे कहते हैं ? प्राचीन काल में भारत का कौन–कौन से देशों से विदेशी व्यापार होता था ?

5. उत्तरा पथ व दक्षिणा पथ से क्या आशय है ? उत्तरा पथ में आने वाले स्थान कौन–कौन से हैं ?

6. दक्षिणा पथ के अन्तर्गत आने वाले मार्ग कौन–कौन से हैं ?

7. भारत के मानचित्र पर उत्तरा पथ एवं दक्षिणा पथ को चिन्हित करें।

गतिविधि

1. प्राचीन काल में भारतीय वस्तुओं की विदेशों में मांग बहुत अधिक रहती थी। मानचित्र देखकर बताएँ कि ऐसे देश कौन–कौनसे थे ?
2. विभिन्न पुस्तकों में रोमांचकारी समुद्री यात्राओं को पढ़ें एवं ऐसी घटनाओं को संकलन करें। अपने अध्यापक एवं अभिभावक से इस कार्य में मदद प्राप्त करें ।

अध्याय 21

हमारी सांस्कृतिक विरासत

संस्कृति क्या है?

किसी भी देश की संस्कृति उसकी अपनी आत्मा होती है, जो उसकी सम्पूर्ण मानसिक पहचान को सूचित करती है। यह किसी एक व्यक्ति या राजा के सुकृत्यों तथा सुकार्यों का परिणाम मात्र नहीं होती है अपितु अनगिनत ज्ञात व अज्ञात व्यक्तियों के निरंतर चिन्तन, दर्शन, कार्य, परम्पराओं का परिणाम होती है। मानव द्वारा सृजित कला, शिल्प, स्थापत्य, साधना, संगीत नृत्य, वैयक्तिक जीवन के नियम, आस्था आदि विषय भी संस्कृति के अन्तर्गत आते हैं। देश और काल में संस्कृति के स्वरूप में मानवीय प्रयत्नों से बदलाव आते रहे, और इस प्रकार संस्कृति का विकास होता रहा।

पिछले अध्यायों में हमने राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्थाओं के बारे में पढ़ा। इस अध्याय में प्राचीनकाल में कला, शिल्प, स्थापत्य और साहित्य के बारे में जानेंगे।

स्तूप– स्तूप बहुत प्राचीन समय में बनाए जाते थे। अस्थियों के ऊपर मिट्टी एवं ईंटों आदि से बनाए जाने वाले अर्द्ध –गोलाकार टीले को स्तूप कहा जाता है। श्रेष्ठ भिक्षुओं के सम्मान में स्तूप बनवाए जाते थे। स्तूप का शाब्दिक अर्थ होता हैं–टीला।

स्तूप

कहते हैं कि शाक्य मुनि गौतम बुद्ध ने अपने शिष्यों को कहा था कि उनके अवशेषों को स्तूप में रखा जाए। बुद्ध के अवशेषों को आठ भागों में बाँट कर आठ अलग–अलग स्थानों पर स्तूप बना कर रखा गया। स्तूप में एक धातु मंजुषा में बुद्ध अथवा बौद्ध भिक्षुओं के अवशेषों को रखकर मिट्टी के टीले में गाड़ दिया जाता था। स्तूप साधारण स्मारक न होकर पूजा स्थल के रूप में पवित्र स्थान होता है।

शुरू में हो सकता है स्तूप महज एक टीला मात्र हो, पर कालान्तर में इसका आकार ईंट अथवा पत्थरों से बड़ा बनाया जाने लगा। इसके ऊपर छत्र लगा दिया गया। चारों तरफ परिक्रमा के लिए 'वेदिका' बनाकर प्रदक्षिणा पथ का निर्माण किया गया। गलियारे को प्रतिमाओं से सजाया जाने लगा।

वर्तमान में आंध्र प्रदेश में कृष्णा नदी के तट पर अमरावती शहर में 'अमरावती' नाम से श्वेत पाषाण (संगमरमर) से निर्मित एक प्रसिद्ध स्तूप है। मध्यप्रदेश में साँची का महास्तूप भी बहुत प्राचीन है। साँची का महास्तूप अपने स्थान पर आज भी स्थित है, किन्तु भारहुत स्तूप के अवशेष भारतीय संग्रहालय कोलकाता में स्थापित है।

चैत्य और विहार– पहाड़ों पर कई गुफाओं का निर्माण किया गया था, जिनमें से कुछ गुफाओं में

पूजा हेतु ठोस पाषाण स्तूपों का निर्माण किया गया। ऐसे पूजा स्थल को चैत्य कहा गया है। कुछ गुफाओं का इस्तेमाल भिक्षुओं के रहने के लिए भी होता था, ऐसी गुफाओं को विहार कहते हैं। विहार दो अथवा तीन मंजिला होते थे। विहार में ठहरने के अलावा भिक्षु पढ़ाई करते, ध्यान करते, अनेक विषयों पर विचार–विमर्श करते थे। इनके बारे में आप पिछले अध्याय में पढ़ चुके है। ये गुफाएँ कार्ले, भाजा, अजन्ता, ऐलोरा और कन्हेंरी में देखने को मिलती है। स्तूप, चैत्य और विहार की दीवारों को मूर्तियों व चित्रों से सुसज्जित किया गया है। इन मूर्तियों एवं चित्रों के विषय बुद्ध के जीवन की घटनाएँ एवं बुद्ध के पूर्व जन्म की कथाएँ (जातक कथाएँ) हैं। गुफाओं में स्वतंत्र रूप से कहीं–कहीं पशु–पक्षी व प्रकृति का अलंकरण भी किया गया है। स्तूप निर्माण में राजा, श्रेष्ठि, व्यापारी और अन्य लोग दान देते थे और उनके नामों को भी पत्थर पर उत्कीर्ण किया गया है।

साँची का स्तूप

चैत्य

अजन्ता की गुफाओं का विहंगम दृश्य

अजन्ता की गुफाएँ

अजन्ता की गुफाओं में प्राचीन स्थापत्य, शिल्प और चित्रकला के बेहतरीन उदाहरण देखने को मिलते हैं। महाराष्ट्र के औरंगाबाद जिले में बाघोरा नदी की घाटी में पहाड़ काट कर दूसरी सदी ईसा पूर्व में

ये गुफाएँ बनी है। हर गुफा से नीचे नदी तक जाने के लिए सीढ़ी काटी गई है। यहाँ कुल 29 गुफाएँ हैं, इनमें से पाँच गुफाएँ पूजा स्थल 'चैत्य' हैं और बाकी गुफाएँ भिक्षुओं के रहने के लिए 'विहार' है। 490 ईस्वी के बाद अजंता की गुफाओं को त्याग दिया गया। ऐसा लगता है मानो अजंता का इस्तेमाल करने वाला सारा समुदाय यह स्थान छोड़ कर ऐलोरा चला गया। ऐलोरा (स्थानीय भाषा में वेल्लूर) उस समय के प्रमुख व्यापारिक मार्ग पर था।

चैत्य गुफा कार्ले

अजंता की एक गुफा का प्रवेश द्वार

अजंता में चित्र बनाने की विधि

अजंता के भित्ति चित्रों के निर्माण के लिए पहले पहाड़ की खुरदरी दीवार को तैयार किया जाता था। इसके लिए खड़ियाँ, गोबर, बारीक बजरी का गारा, चावल की भूसी, उड़द की दाल के छिलके, अलसी को पानी में कई दिनों तक मिलाकर सड़ाया जाता था। इन सभी को मिलाकर, पीसकर पलस्तर हेतु गाढ़ा लेप तैयार कर दीवार पर एक इंच मोटा पलस्तर कर दिया जाता था। इसके ऊपर अण्डे के छिलके के मोटाई के बराबर सफेद चूने का घोल चढ़ाया जाता था। इसके बाद लाल रंग की रेखाओं से कच्चा चित्र बनाकर उसमें रंग भर दिया जाता था। चित्र में रंग भर देने और काली रेखाओं से पक्का चित्र बन जाने के बाद उसे कन्नी से पीटा जाता था, जिससे रंग दीवार की गहराई तक बैठ जाता। तत्पश्चात् पूरे चित्र को चिकने पत्थर से

अजंता गुफाओं के प्रवेश द्वार की छत पर चित्रकारी

घोटकर पॉलिश की जाती। इस विधि को फ्रस्को (भित्ति चित्र) कहा जाता है।

अजंता की गुफाओं में बने चित्र दुनिया भर में प्रसिद्ध हैं। यहाँ की चित्र परम्परा ने पूर्वी एशिया में जावा, सुमात्रा, मलेशिया, श्रीलंका, चीन आदि की चित्र परम्परा को बहुत प्रभावित किया।

अजंता गुफा में बुद्ध निर्वाण की मूर्ति

अजंता गुफाओं के भीतर चैत्यों में निर्मित स्तूपों पर बुद्ध के चित्रों और बुद्ध के समय की अनेक कथाओं को चित्रित किया गया है। इनके साथ बचे रिक्त स्थानों को पुष्पीय अलंकरण अथवा पशु–पक्षी की आकृतियों से सजाया गया।

यह भी जानें –हिन्दुस्तान में मूर्तिकला के निर्माण का आरम्भ सिंधु– सरस्वती सभ्यता से प्राप्त मृणशिल्पों एवं धातु और पाषाण निर्मित प्रतिमाओं से होता है। भारतीय मूर्तिकला का वास्तविक स्वरूप मौर्यकाल से शुरू होता है।

पत्थर तराश कर मूर्तियाँ बनाने की कला हड़प्पा की सभ्यता में मौजूद थी, यह हम पहले देख चुके हैं। सम्राट अशोक के समय में सारे मौर्य साम्राज्य में पत्थर तराश कर अलग–अलग स्थानों पर शिलालेख रखे गए, जिनमें साम्राज्य की व्यवस्था के बारे में सम्राट के विचारों का उल्लेख था। लगता है कि ये शिलालेख सम्राट द्वारा लोगों तक अपनी बात पहुँचाने का माध्यम था।

इसी तरह मौर्य काल में ही अनेक स्थानों पर पत्थर के स्तम्भ (लाट) खम्भे खड़े किए गए, जिन पर सम्राट का संदेश होता था। कई स्तम्भों पर पशुओं जैसे सिंह, बैल, घोड़ा, हाथी की बहुत सुन्दर मूर्तियाँ बलुआ पत्थर से बनती थी। सारनाथ की लाट एवं महरौली का लौह स्तम्भ तत्कालीन कला के अभूतपूर्व उदाहरण हैं। सारनाथ से जो अशोक स्तंभ मिला उसके शीर्ष पर चार सिंह पीठ सटाये बैठे हुए हैं। उसके शीर्ष भाग पर उत्कीर्ण सिंह इतने आकर्षक और सुन्दर हैं कि उसे भारत के राष्ट्रीय चिन्ह के रूप में स्वीकार किया गया है। इस स्तम्भ के सिरे पर चार शेर चारों दिशाओं की ओर मुँह किए बैठे हैं, जो राष्ट्र की शक्ति व शौर्य के प्रतीक

डाक टिकिट

मूर्तियाँ

अशोक स्तंभ

है। इनके नीचे गोलाकार चौकी है, उस पर उभारदार चक्र बैल, घोड़ा, हाथी, शेर की आकृतियाँ बनाई गई है। अशोक स्तम्भ का यह शीर्ष दुनिया की मूर्तिकला में अपना विशिष्ट स्थान रखता है। स्तम्भों और मूर्तियों पर ओपदार पॉलिस की गई है।

इसी प्रकार इस काल में स्वतन्त्र मूर्तियाँ भी बनी हैं, उनमें पाटलिपुत्र के समीप दीदार गंज की चँवर–धारिणी स्त्री की मूर्ति, पटना व परखम से प्राप्त यक्ष, लोहानुपुर से प्राप्त मानव धड़, मौर्यकालीन शिल्प कला वैभव आदि प्रमुख उदाहरण है।

कुषाण काल में सर्वप्रथम बुद्ध की मानव रूप में मूर्तियाँ बनी, जो भारतीय कला को इस युग की सर्वोत्तम देन हैं। इस काल की कला के गान्धार व मथुरा मुख्य केन्द्र थे। गान्धार व मथुरा में बौद्ध तथा हिन्दू देवी–देवताओं, जैन तीर्थंकरों, शिव के दो रूप यथा एकलिंग व दूसरा मानव रूप के साथ–साथ कृष्ण–बलराम, कार्तिकेय, इन्द्र, सूर्य, लक्ष्मी, सरस्वती आदि की मूर्तियाँ देखने को मिलती हैं। यहाँ यक्ष–यक्षिणी की मूर्तियाँ भी बनी हैं।

गान्धार मूर्तिकला के शिल्पकार यूनानी थे, लेकिन उनकी कला का आधार भारतीय विषय थे। गान्धार मूर्तिकला में बुद्ध की मूर्तियों के सिर पर घुंघराले जूड़े में बंधे हुए बाल और प्रभामण्डल उकेरा गया है। इन मूर्तियों में वस्त्रों में पारदर्शिता एवं सलवटों का यथार्थ प्रभाव आया है।

गुप्तकाल में चित्रकला, मूर्तिकला व मन्दिर निर्माण कला के अनके प्रमाणित शास्त्रों की रचना हुई। इस काल की मूर्तिकला भारतीय तत्वों से ओतप्रोत थी। इस काल में तीन प्रमुख धर्मों, हिन्दू, बौद्ध और जैन धर्म की अनके मूर्तियाँ बनाई गई है।

इस काल में बनी मूर्तियों में हिन्दू धर्म से संबंधित शेषनाग, शैया पर विश्राम करते हुए विष्णु (देवगढ़ मन्दिर, झाँसी उत्तर प्रदेश में), शिव–पार्वती, त्रिमूर्ति आदि प्रमुख हैं। सारनाथ स्थित धर्म चक्र प्रवर्तन की मुद्रा में पद्मासन्न बुद्ध की प्रतिमा तथा अनेक जैन तीर्थंकरों की प्रतिमाएँ इस काल में निर्मित हुई हैं। भारतीय कला को इतिहास में इस काल को स्वर्ण युग के नाम से जाना जाता है।

साहित्य

कहानी, काव्य आदि साहित्य में गिने जाते है। वैदिक साहित्य के बारे में हम पहले ही जान चुके हैं कि इन्हें पढ़ा नहीं जाता था बल्कि इन्हें बोला और सुना जाता था और इसी रूप में नई पीढ़ी को हस्तान्तरित किया जाता था। इनको सही उच्चारण के साथ अगली पीढ़ी को संप्रेषित किया जाता था। साहित्य लिखने का प्रारम्भ चौथी सदी ईस्वी में शुरू होता है।

प्राचीन भारत का साहित्य कई तरह का था। कुछ धर्म से संबंधित था जैसा कि वैदिक साहित्य, कुछ में धर्म को लेकर कहानियाँ थी जैसे कि जातक–कथाएँ, जिनके बारे में पहले जान चुके है कि ये बुद्ध के पूर्व जन्म की कथाएँ हैं। अनेक काव्य और कथाएँ धर्म के अलावा भी थी, जो पुरानी यादों को ताजा करती थी।

पता करें–

स्वतंत्र भारत में प्रकाशित होने वाली पहली डाक टिकट कौन सी थी, जिसमें राष्ट्रीय चिन्ह के प्रतीक को दर्शाया गया है ?

रामायण'' और 'महाभारत' प्रसिद्ध महाकाव्य हैं। महर्षि वाल्मीकि द्वारा लिखित ''रामायण'' में अयोध्या के राजकुमार श्रीराम के साहसिक कार्यों एवं उनके मर्यादा पुरुषोत्तम जीवन की महागाथा है। श्रीराम के जीवन की कथा हिन्दुस्तान के अलावा पूर्वी एशिया में भी फैली। आज भी श्रीराम की कथा हिन्दुस्तान के कोने–कोने के साथ संपूर्ण पूर्वी एशिया व विश्व के विभिन्न भागों में सुनी व मंचित की जाती है। महर्षि वेद व्यास द्वारा रचित 'महाभारत' में कुरु परिवार के बीच लड़े गए युद्ध से संबंधित गाथा है। महाभारत में ही कुरुक्षेत्र के युद्ध मैदान में श्रीकृष्ण द्वारा अर्जुन को दिए गए महान् संदेश जो आज भी प्रासंगिक हैं, 'भगवत्गीता' के रूप में संगृहीत है।

हम अगली कक्षाओं में हम जानेंगे कि किस तरह गीता में भक्ति धारा का स्रोत निहित है। दक्षिण के मदुरै शहर में तमिल भाषा के साहित्य को 'संगम' साहित्य कहा जाता है। यह साहित्य आज भी जीवंत है। संस्कृत में गुप्त काल में कवि कालिदास ने अनेक काव्यों की रचना की थी। उनके नाटक जैसे–'अभिज्ञान शाकुंतलम्' आज भी खेले जाते हैं। कालिदास ने अपने काव्यों में संस्कृत और प्राकृत दोनों भाषाओं का इस्तेमाल किया है। उच्च वर्ग के शिक्षित पात्र संस्कृत बोलते थे व बाकी प्राकृत। इससे इतिहासकार यह निष्कर्ष निकालते हैं कि अब तक भारत में गैर संस्कृत प्राकृत भाषाओं का काफी प्रचार हो गया था। कालान्तर में इन्हीं प्राकृत भाषाओं से हमारी वर्तमान भाषाएँ उत्पन्न हुई हैं।

भरत का 'नाट्यशास्त्र' इस काल की प्रमुख रचना है, जो नाट्य नर्तन, अभिनय, संगीत आदि कलाओं की जानकारी देता है। इसी काल में 'विष्णु–धर्मोत्तर पुराण' जैसे बहु–उपयोगी ग्रंथ की रचना हुई।

प्राचीन काल के प्रमुख साहित्यकार और उनकी रचनाएँ–

विष्णु शर्मा	:	पंचतंत्र
कालिदास	:	अभिज्ञान शांकुतलम्, मेघदूत, ऋतुसंहार, कुमारसंभव
क्षुद्रक	:	मृच्छकटिकम्
अमरसिंह	:	अमर कोश
सम्राट हर्ष	:	रत्नावली, नागानंद, प्रियदर्शिका
बाणभट्ट	:	हर्षचरित
इलांगरे आदिगल	:	सिल्पादिकरम् (तमिल)
सीतलै सत्तनार	:	मणिमेखलई (तमिल)

विज्ञान और तकनीकी के क्षेत्र में भी भारत का प्राचीन साहित्य अत्यन्त उन्नत था। आयुर्वेद का ग्रंथ चरक ने लिखा था, जो महान् चिकित्सक था। इसमें दवाओं और बीमारी के इलाज के बारे में वर्णन है। इसी तरह सुश्रुत संहिता में संकलित शल्य चिकित्सा संबंधी जानकारी संगृहीत है। आठवीं सदी में सुश्रुत संहिता को अरबी में अनूदित किया गया। इस तरह से हिन्दुस्तान में पनपा चिकित्सा संबंधी ज्ञान अरब प्रदेशों में भी पहुँचा और अरबों के माध्यम से यूरोप में पहुँचा।

ताड़ पत्र पर लिखा तमिल साहित्य

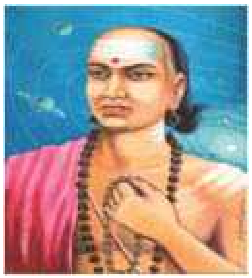

आर्यभट्ट

आर्यभट्ट– आर्यभट्ट ने अपने ग्रंथ 'आर्यभट्टीय' में खगोल शास्त्र के बारे में बताया है जो भारत के खगोल विज्ञान की महानता को दर्शाता है। सबसे पहले 'आर्यभट्टीय' में यह बताया गया है कि पृथ्वी गोल है और पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है, साथ ही यह भी बताया गया कि ग्रहण के समय पृथ्वी की छाया चन्द्रमा पर पड़ती है। आज भी खगोल–शास्त्री उनके द्वारा दिए गए सिद्धान्तों को प्रामाणिक मानते हैं।

बौद्ध ग्रंथ

1. विनय पिटक (भिक्षुओं हेतु नियमों का संग्रह)	2. सुत्त पिटक (बुद्ध की शिक्षाएँ)	3. अभिधम्म पिटक (दर्शन व सांसारिक ज्ञान के विषय)

शब्दावली

प्रदक्षिणा पथ – परिक्रमा लगाने का रास्ता

बौद्ध भिक्षु – बौद्ध संत

अनूदित – अनुवाद किया हुआ

अभ्यास प्रश्न

1. स्तूप निर्माण में होने वाला खर्च कौन वहन करता था ?
2. अजंता की गुफाएँ कौनसी नदी–घाटी के पहाड़ को काट कर बनाई गई थी ?
3. स्तूप किसे कहते हैं ?
4. अमरावती का स्तूप कहाँ स्थित है ?

5. जातक कथाएँ किससे संबंधित है ?
6. विहार किसे कहते हैं ?
7. आर्यभट्टीय ग्रन्थ की रचना किसने की ?
8. चरक ने किस ग्रंथ की रचना की ?
9. स्तूप की संरचना के बारे में वर्णन कीजिए।
10. प्राचीन काल के साहित्य के बारे में लेख लिखिए।
11. भाग 'अ' को भाग 'ब' से सुमेलित कीजिए :–

भाग 'अ'	भाग 'ब'
1. जातक कथाएँ	नाच।
2. संगम साहित्य	नाटक।
3. शैया	बुद्ध के पूर्व जन्म की कथाएँ।
4. नाट्य	तमिल भाषा में रचा साहित्य ।
5. नर्तन	बिछौना।

गतिविधि

1. हमारे राष्ट्रीय चिन्ह का उपयोग कहाँ–कहाँ होता है ? सूची बनाइए ।
2. कुछ जातक कथाओं का संकलन कीजिए एवं अपने मित्रों को सुनाइये ।